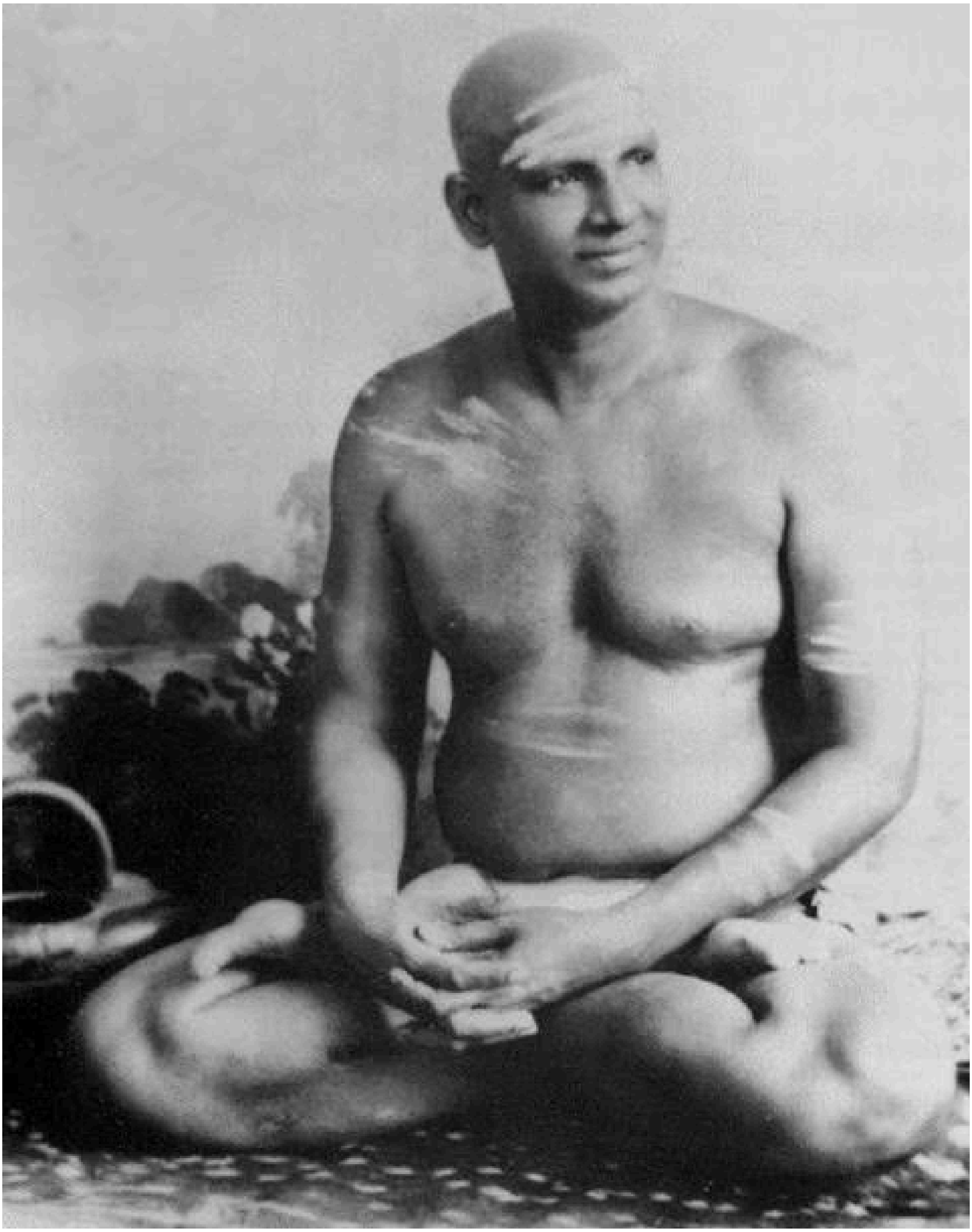
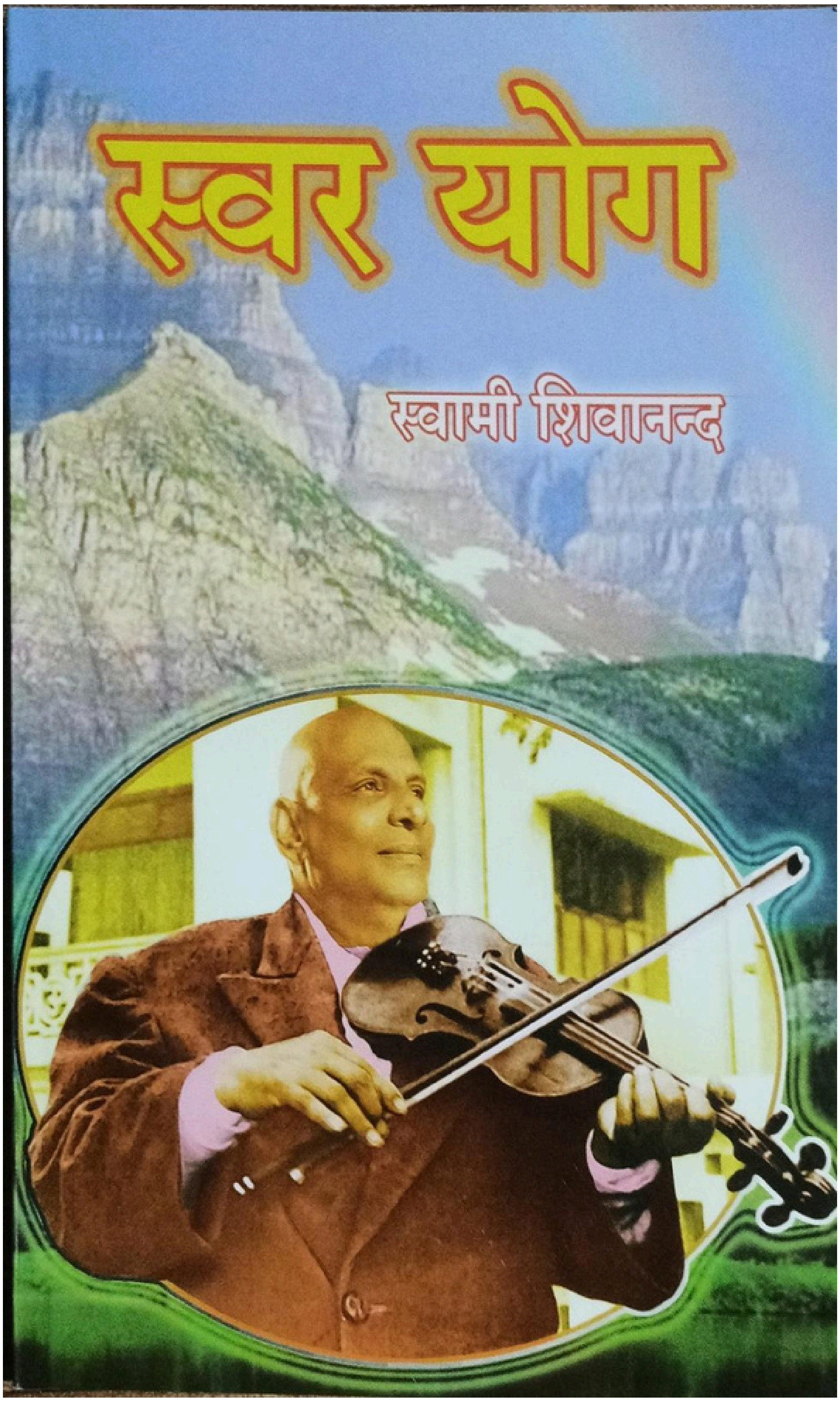



स्वर योग
स्वामी शिवानन्द

स्वर योग

'SVARA YOGA' काहिन्दीअनुवाद

लेखक

श्री स्वामी हिवानन्द सरस्वती

अनुवाहदका

हिवानन्द राहिका जिौक

प्रकिाक

द हिवाइन लाइफ सोसायटी

पत्रालय : हिवानन्दनगर-249 192

हिला: हटिरी गढ़वाल, उत्तराखण्ड (हिमालय), भारत

www.sivanandaonline.org, www.dishq.org

प्रथम हिन्दी संस्करण-2006

हितीय हिन्दी संस्करण-2008

तृतीय हिन्दी संस्करण-2011

चतुथथ हिन्दी संस्करण-2016

पंचम हिन्दी संस्करण -2019
[500 प्रहतयाँ]

HS14

PRICE:80/-

'द हिवाइन लाइफ सोसायटी, हिवानन्दनगर' के हलए
स्वामी पद्मनाभानन्द िारा प्रकाहित तथा उन्ीं ंके िारा 'योग-वेदान्त
फारेस्ट एकिोमी प्ेरेस, हिवानन्दनगर, हि. हटिरी गढ़वाल,
उत्तराखण्ड, हपन 249 192' में मुहित।
For online orders and Catalogue visit: disbooks.org

प्रकािकीय

स्वर योग प्राचीन हिन्दू हवज्ञान एवं कला िै हिसने इस िरीर में िीवन-तत्त्व, प्राण तथा िीवन के कार्यों को पूणथत: हवश्लेहित हकया िै। यि हवहभन्न नाहियों ंके बारे में व्यवहृत िै हिनके साथ प्राण इस िरीर में स्पन्दन्दत िोता िै, इसे िीवन देता िै तथा यि उत्तम स्वास्थ्य और दीर्ाथयु को न्दथथर करने िेतु प्राण के प्रवाि को हनयहमत करने के

सिानों ंका भी हनदेि देता िै। यि हवज्ञान अथवा स्वर योग प्राणायाम हवज्ञान से अहिक सूक्ष्म और भली प्रकार समझा िा सकने योग्य िै। यहद प्राणायाम से इसकी तुलना की िाये, तो स्वर योग के समक्ष प्राणायाम इसकी बाह्य रेखा के समान िै। स्वर योग में िमें रोग तथा मृत्यु को रोकने िेतु हवहभन्न प्रभाविाली सिान प्राप्त िोते िैं। स्वर योग की सिाना हनपुण योगी के मागथ-दिथन में की िानी चाहिए।

बीसवीं ंसदी के आिुहनक ऋहि और योगी स्वामी हिवानन्द िी ने इस पुस्तक में इस अल्पज्ञात हकनु्त मित्त्वपूणथ और व्याविाररक, वैज्ञाहनक और योग की िाखा (हिसका वणथन प्राणायाम सिाना, िठयोग, योगाभ्यास और कुण्डहलनी योग में सामान्य रूप से निीं ंहमलता िै) के बारे में हलखा िै। आध्यान्दिक सिाकों ंऔर पाठकों ंिेतु इस पुस्तक के हविय पूणथ व्याविाररक लाभ के िैं। और यि किना अहतियोन्दि निीं ंिोगी हक प्रते्यक पाठक के हलए यि उपयोगी िै।

-द डिवाइन लाइफ सोसायटी

अनुवाहदका के दो िब्द

गुरुर्थह्मा गुरुहवथषु: गुरुदेवो मिेश्वरः।
गुरुः साक्षात् परं ब्र्ह्म तसै्मै श्रीगुरवे नमुः ।।

परम पूज्य गुरुदेव श्री स्वामी हिवानन्द िी मिारि के चरणों ंमें मेरा ित–ित नमन।

गुरुदेव की हलखी हुई प्रते्यक पुस्तक पूणथ रूप से व्याविाररक िीवन में उतारने योग्य िै; क्ोंहक गुरुदेव ने पिले स्वयं इन्ें िीवन में व्यविार में लाया िै, उसके बाद िी इन्ें िन-मानस के लाभ िेतु पुस्तक के रूप में हलखा िै। वास्तव में इस पुस्तक का हिन्दी अनुवाद करते समय मुझे ऐसा अनुभव हुआ हक गुरुदेव स्वयं िी स्वर

योगी थे। ये बात तो वैसे सवथ हवहदत िै हक स्वामी िी हत्रकालर्दी थे और यि स्वर योगी को प्राप्त िोने वाली हसन्दियों ंमें से एक िै।

गुरुदेव ने इस पुस्तक में िमें अत्यन्त सरल स्वर सािना बतायी िै तथा यि बतलाया िै हक हकस हदन िमारा कौन-सा स्वर चलना चाहिए, कौन-से स्वर में कौन-से कायथ करने चाहिए हिससे िम उस कायथ में पूणथ सफलता प्राप्त कर सकें तथा यहद आपका स्वर सिी न चल रिा िो, उसे कैसे ठीक हकया िाये, इस िेतु उपाय भी इस पुस्तक में हदये गये िैं। इसके साथ-साथ िमारा िरीर हिन पंच तत्त्वों ंसे हनहमथत िै, उनके बारे में तथा उनके प्रयोग के बारे में भी इस पुस्तक में वणथन िै और िमें इसमें एक अत्यन्त मित्त्वपूणथ हकन्तु सरल सािना हमलती िै, वि िै छाया त्राटक हिसके बारि विथ तक अभ्यास करने से मनुष्य हत्रकालज्ञ िो िाता िै।

प्रसुतुत पुस्तक में उस योग के बारे में गुरुदेव ने हलखा िै िो िमारी श्वासों ंसे सम्बन्दित िै। यि तो िम सभी िानते िैं हक िब तक श्वास िै, तभी तक िमारा िीवन िै; लेहकन यि बात बहुत िी कम लोगों ंको हवहदत िै हक इन्ीं ंश्वासों ंको हनयहमत करके िम िीवन के प्रत्येक कायथ में सफलता प्राप्त कर सकते िैं और अनन्त काल तक स्वथथ िीवन व्यतीत कर सकते िैं और इसी सािना का नाम िै स्वर योग सािना।

अन्त में मेरा आप सभी से यिी हवनम्र हनवेदन िै हक आप इस पुस्तक को पढ़ कर अपने दैहनक िीवन में प्रयोग में लायें तथा अपने प्रत्येक कायथ में सफलता और दीर्ाथयु तथा स्वथथ िीवन प्राप्त करें।

गुरुदेव की अिेतुकी कृपा से मुझे कुछ पुस्तकों ंका अंग्रेिी से हिन्दी माध्यम में अनुवाद करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। मेरे िारा अनुवाहदत कुछ पुस्तकों ंका उल्लेख इस प्रकार िै: र्र की सरल औिहियााँ, अच्छी नीदं कैसे सोयें, सौ विथ कैसे हियें, कुण्डहलनी योग, स्वर योग, िठ योग, िारणा और ध्यान, कमथ और रोग, आिुहनक सन्त स्वामी हिवानन्द एक िीवनी, देवी मिात्म्य, िनवान् कैसे बनें और मूहतथपूिा का दिथन।

सदा गुरुदेव की सेवा में
हिवानन्द राहिका अिौक

अनुक्रमहणका

अध्याय – 4

अध्याय – 5

अध्याय – 6

अध्याया – 7

अध्याय – 8

अध्याय – 9

अध्याय – 10

अध्याय – 11

पररहिष्ट

थटर योग

अध्याय १
प्रस्तावना

वतथमान कुछ ि तान्दब्दयों ं में हवज्ञान की अपार प्रगहत के बाद भी यि िीवन सदा रिस्यमय िै। यिााँ तक हक प्रवीण हचहकत्सकों ंिारा की गयी िोिों ंके बाद भी यि रिस्य सुलझ निीं ंसका िै। संक्षेप में यि िीवन हकसी भी प्रयोगिाला में प्रयोग का हविय निीं ंबना। भारतविथ के सन्तों ंऔर ऋहियों ंकी मानहसक प्रयोगिालाएाँ िी िमारी एकमात्र पथ-प्रदिथक िैं, िो िमारे िीवन की इस पिेली को सुलझाती िैं। यिी ज्ञान िमने अपने प्राचीन ऋहियों ंऔर योहगयों ंसे उत्तराहिकार में प्राप्त हकया िै।

भारतीय दिथन िास्त्र, योग-वेदान्त के इहतिास में िमें िीवन के प्रहत अनेक बुन्दिमत्तापूणथ दृहिकोण हमलते िैं। दिथन के हवहभन्न तत्त्वदहिथयों ंने हभन्न-हभन्न प्रकार से िीवन को स्वयं के तरीके से हवश्लेहित हकया िै। लेहकन हिन्दू हवचारों ंके सवथश्रेष्ठ ग्रन्थ उपहनिद् ने िमें िीवन का सिी प्रस्तुहतकरण हदया िै। उपहनिदों ंके ऋहियों ं को प्रत्येक िीव के िन्म, वृन्दि तथा हक्रयाकलापों ंके हनष्पक्ष और पूणथ हवश्लेिण ने इस हनणथय पर पहुाँचाया िै हक श्वास िी िीवन, ऊिाथ और हक्रयािीलता िै तथा यि हक श्वसन हक्रया िी िीवन, ऊिाथ और गहतहवहि िै।

मनुष्य, िैसा हक िम देखते िैं, तीन भागों ंसे हनहमथत िै। प्रथम तो िम मांस और रक्त का हपण्ड देखते िैं िो नाड़ी तनुतुओं ंके िाल िारा आपस में िुड़ा हुआ िै तथा इसका आिार िहियों ंसे हनहमथत कंकाल िै। यि मांस का हपण्ड स्वयं कोई कायथ करने में असमथथ िै। दूसरा भाग िै वि चेतना िो इस हपण्ड के भीतर हनवास करती िै। चेतना भी अपने अिैत गुण के कारण हनन्दिय रिती िै। यिााँ तक हक िीव, िो अिंकार से युक्त िै, उसमें कारण न्दथथहत में यि चेतना उसी प्रकार रिती िै िैसे िीरे को अिंकार की चादर ने ढााँक रखा िो। कारण न्दथथहत में हकसी प्रकार की गहतहवहि निीं ंिोती िै। इससे अगली न्दथथहत सूक्ष्म अवथथा में हक्रयाहवहि प्रारम्भ िोती िै। यिी तीसरा भाग िै। िीव तथा सूक्ष्म िरीर को िोड़ने वाला तनुतु िै प्राण। इसी प्रकार सूक्ष्म िरीर तथा थथूल भौहतक िरीर को िोड़ने वाला तनुतु वि वायु िै हिसे िम श्वास िारा भीतर लेते िैं। यि वायु इसमें हनहित प्राण का थथूल रूप िै।

यि प्राण की गहत िै िो सूक्ष्म ज्ञानेन्दन्द्रयों ंऔर कमेन्दन्द्रयों ंके हवहभन्न केन्द्रों ंको संचाहलत करती िै। यि िमारे िारा श्वास के िारा हलये िाने वाले प्राण की गहत िै िो िमारे िाथों,ं पैरों ंतथा अंगों ंको संचाहलत करती िै और यि िमारे िरीर के प्रत्येक कायथ को सिारा देती िै।

ईिावास्योपहनिद् में आप पायेंगे : **"तस्मिन्नपो मातररश्वा दिाहत"**, हिसका अथथ इस प्रकार िै- मातररश्वान (वायु) सभी िीहवत प्राहणयों ंकी गहतहवहियों ंको सिारा देती िै। प्रश्नोपहनिद् के हितीय प्रश्न में आप पायेंगे : **"तान् वररष्ठः प्राण उवाच... अवष्टभ्य हविारयामीहत"**, प्राण उनमें से सबसे बड़ा िो गया िै। “भ्रहमत न िों,ं मैंने इस िरीर को अवलम्बन प्रदान करने के हलए स्वयं को पााँच भागों ंमें हवभाहित हकया िै।" पुनुः यिी हवचार आप बृिदारण्यक उपहनिद् (अ. ६, श्लोक १) में पायेंगे।

हकसी भी िीव के हलए प्राण अथवा िीवन िन्दि के हबना कोई कायथ करना सम्भव निीं ंिै। एक तरफ िीव के अिभाव का अन्दस्तत्व ि तथा दूसरी तरफ इसके विान िरीर-थथूल अथवा सूक्ष्म का अन्दस्तत्व िै। सम्पकथ में आने वाली प्रते्येक वसुतु से सम्पकथ में आने पर अिभाव एक िो िाता ि और सोचता ि हक मैं िी यि िरीर हाँ। इसके अगले िी क्षण यहद िरीर के श्वसन-संथथान में कुछ गड़बड़ िोती िै, तो यि उससे िुि िाता िै। लेहकन सत्य तो यि ि हक वि इन सबसे परे ि और वि तो इस भौहतक िरीर और प्राण के कायों के हवशे्लेिणाक अध्ययन िेतु
इस सबको हनयन्दित करने की न्दथथहत में िै।
यहद एक बार मनुष्य इस प्राण का प्रबिन हकस प्रकार हकया िाये, यि सीख िाता ि तो वि िीवन के
प्रश्न को सरलता से िल कर लेगा और िीवन पर स्वाहमत्व प्राप्त कर लेगा तथा अनन्त विों तक हनरोग िीवन व्यतीत कर सकेगा। तब वि उस न्दथथहत में िोगा, िब वि मन के हवचार मात्र से िी ब्ह्माण्ड से अहिकाहिक मात्रा में यि ऊिथ तत्त्व, िीवन िन्दि खीचं सकेगा। वि ब्ह्माण्ड से ऊिथ के दोिन के रिस्य तथा िीवन का हकस
प्रकार उपयोग हकया िाये और उसे हकस प्रकार बनाये रखा िाये, यि िानने के बाद वि सदा युवा रि सकता िै।
यिी समय को छलने का, हदन के चौबीसों ंर्ण्टे काम कर सकने का, सदैव तािगी और ऊिथ तथा यौवन से
पररपूणथ रिने का यौहगक मागथ िै।

सच्चा च्यवनप्रा

बािार में आयुवेहदक च्यवनप्रा प्राप्त िोता िै। इसका नाम च्यवन ऋहि के नाम पर रखा गया िै। च्यवन
ऋहि की पौराहणक कथा से िमें ज्ञात िोता ि हक हकस प्रकार उन्ोंनें देवताओं ंके वैद्य अहश्वनीकुमारों ंको प्रसन्न हकया और पुन: यौवन प्राप्त हकया। च्यवनप्रा का प्रयोग यौवन और ऊिथ को अकुषुण बनाये रखने िेतु िोता ि

च्यवन ऋहि की किानी का गुप्त अथथ हिविे मित्त्वपूणथ िै। च्यवन ऋहि इस मानव–िरीर को व्यि करते
िैं। च्यवन की उत्पहत्त मूल संसृकृत िब्द चुयु से हुई िै। इसका अथथ िै–िाने के हलए। यि िरीर कभी एक िगि
निीं ंठिरता, वरन् सदैव एक अवथथा से दूसरी में िाता रिता िै। इस प्रकार यि बचपन से वृिावथथा तक
हवकहसत िोता ि और हफर नि िो िाता िै। िरीर की ज्ञानेन्दन्द्रयाँ देव िैं। ये प्राण की िन्दि से सदा युवा और ऊिथवान् बने रिते िैं। हिस प्रकार िारीररक रोगों ंके हलए िम हचहकत्सक के पास िाते िैं, उसी प्रकार उनकी ऊिथ एवं िीवन िन्दि के हलए वे प्राण पर हनभथर िैं। प्राण और अपान अहश्वनीकुमार िैं। इन्ें अहश्वनीकुमार इसहलए किा गया िै; क्ोंहक वे दो रिों ंकी भाँहत हबना एक क्षण भी हवश्राम हकये हनरन्तर दौड़ते रिते िैं। ये अहवभेद्य िैं, इसहलए इन्ें िुिवाँ किते िैं। च्यवन ऋहि ने इनका अनुग्रि प्राप्त हकया अथाथत् प्राण तथा अपान पर हनयिण प्राप्त हकया और यौवन, ओि तथा ऊिथ के आनन्द उपभोग के हलए उनका उपयोग हकया।

इस प्रकार च्यवन ऋहि की औिहि सच्चा च्यवनप्रा का हचर-यौवन प्राप्त करने िेतु प्रयोग करने का अथथ
िै-योग के िारा श्वास पर हनयिण और उसका उपयोग। और यिी रामबाण िन्दिविथक तथा िन्दिप्रदाता िै।
इसहलए यि प्रते्येक उस व्यन्दि की अहनवायथ आवश्यकता ि िो दीर्ाथयु, िन्दि, उत्साि, सूफूहतथ एवं ओि से पूणथ
िीवन व्यतीत करना चािता िो।

स्वास्थ्य और दीर्ाथयु

आयु में वृन्दि के साथ िरीर में क्षीणता आना अवश्यम्भावी िै। यहद इस क्षीणता को रोका िा सके, तो वृावथथा के कारण आने वाली दुबथलता से बचा िा सकता िै। यि कायथ हनम्न हक्रयाओं ंको दैहनक हदनचयाथ में संयुि करके हकया िा सकता िै :

हवपरीत करणी प्रातुः-सायं दोनों ंसमय एक-एक र्णटे

सरस्वती चालन प्रातुः-सायं दोनों ंसमय ४५-४५ हमनट

सरस्वती चालन के तत्काल पश्चात् भन्दस्त्रका करना चाहिए।

और हनम्न क्रमानुसार बि त्रय का अभ्यास हकया िाये :

प्रथम-सरस्वती चालन, हितीय–िालिर बि, तृतीय- उहियान बि, चतुथथ-मूल बि ।
यहद उपरिी के साथ केवल कुम्भक संयुि कर हदया िाये, तो वृावथथा को रोका िा सकता िै।

स्वर योग

स्वर योग प्राचीन हिन्दू हवज्ञान तथा कला िै हिसने इस िरीर में िीवन-तत्त्व, प्राण की गहतहवहि और िीवन के कायथ-सम्पादन का पूणथ हवश्लेिण हकया िै। यि हवहभन्न नाहियों ंके बारे में व्यवित िै हिनके साथ यि प्राण इस िरीर में स्पन्दन्दत िोता िै, इसे िीवन देता िै तथा यि उत्तम स्वास्थ्य और दीर्ाथयु को न्दथथर करने िेतु प्राण
के प्रवाि को हनयहमत करने िेतु सािनों ंका हनदेि देता िै। यि हवज्ञान या स्वर योग प्राणायाम-सािना की अपेक्षा अहिक सरल और सरलता से समझा िा सकता िै। यहद प्राणायाम से स्वर योग की तुलना की िाये, तो प्राणायाम स्वर योग की बािरी सीमा मात्र िै। स्वर योग में िमें रोग तथा मृत्यु को रोकने की हवहभन्न प्रभावकारी हवहियााँ प्राप्त िोती िैं। स्वर योग की सािना पूणथ योगी (स्वर योग में प्रवीण) के प्रत्यक्ष हनदेिन में की िानी चाहिए।

अध्याय २
स्वर एवं योग
स्वर

स्वर अथाथत् वायु िो नाहसका-रन्ध्रों ंसे श्वास िारा तथा रुरहट िारा ली िाती िै। यि िब्द मूल स्वर िब्द से हलया गया िै। स्वर का अथथ िै-'आविा' तथा इसका दूसरा अथथ िै- 'श्वास लेना' ।

श्वास दोनों ंनासा-रन्ध्रों ंसे एक-समान निीं ंआती। िब एक नासा-रन्ध् से श्वास बन्द िो िाती िै, तो दूसरे से प्रारम्भ िो िाती िै। हकसी भी नासा-रन्ध् से श्वास के प्रारम्भ िोने को 'स्वरोदय' किते िैं।

प्राचीन ऋहियों ंने दोनों ंनासा-रन्ध्रों ंमें से प्रत्येक में श्वास के प्रारम्भ िोने (स्वरोदय) तथा बन्द िोने पर कुछ हििवे बातों ंको देखा, िो उनकी हवहभन्न गहतहवहियों ंपर प्रभाव िी निीं ंिालती, वरन् उन पर िासन करती थीं।ं इस िरीर में िीवन की उपन्दथथहत, हवहभन्न आन्तररक अंगों ंके कायथ, स्वास्थ्य की पूणथता अथवा रोगों ंका प्राकट्य, मन का सनुतुलन अथवा हवचलन-सभी हकसी भी एक नासा-रन्ध् में श्वास के प्रवाि पर हनभथर करते िैं।

इन ऋहियों ंने श्वास की गहत के हवश्लेिणाक अध्ययन के अपने अनुभवों ंको हलहपबि हकया तथा इसे हवहभन्न नामों ंिैसे स्वरोदय, स्वर हवज्ञान, स्वर िास्त्र आहद से सम्बोहित हकया।

स्वर या श्वास सभी प्राहणयों ंका प्रथम कारण िै; क्योंहक हबना इसके कोई कायथ सम्भव निीं ंिै। स्वर इस िरीर में हबलकुल िि्ु िोते िैं; लेहकन ये उन नाह़ियों ंपर हनभथर करते िैं, हिनमें इनका प्रवाि िोता िै। हलंग रीर
(स्वर तथा नाह़ियों ंिारा हनहमथत िै।

स्वर मात्र एक िै। यि पिले स्वयं को तीन भागों ंमें हवभाहित करता िै तथा यि पााँच गुणा काम करता िै और इस प्रकार यि अपनी पूणथता को खोये हबना हवहभन्न पच्चीस प्रकारों ंमें प्रकट िोता िै।

स्वर ब्र्ह्म का प्रहतहबम्ब िै। स्वर योग से गुप्त ज्ञान तथा स्वर योग से अहिक उपयोगी सम्पहत्त कोई िो िी निीं ंसकती। स्वर में िी सारे वेद और िास्त्र िैं। यि रिस्यों ंका रिस्य गुप्त से भी गुप्त, ब्र्ह्म अथवा परमािा को प्रकट करने वाला तथा परम िान्दन्त और परमानन्द को देने वाला िै।

अन्तःश्वसन और उच्छवसन की प्रकृहत का ज्ञान िोने से, स्वर योग को व्याविाररक रूप से और सैान्दन्तक रूप से अच्छी तरि समझने पर वतथमान काल, भूत काल और भहवष्य काल का ज्ञान िो िाता िै, चमत्काररक ह्न्दियााँ प्राप्त िोती िैं तथा काल पर हनयंिण प्राप्त िोता िै। स्वर योग की िन्दि से मनुष्य मृत्यु से परे िो िाता िै और उसे इच्छा-मृत्यु अथवा इस िरीर को अत्यहिक दीर्थ काल तक बनाये रखने की िन्दि प्राप्त िोती िै।

योग

योग िब्द की व्युत्पहत्त मूल यिु िब्द से हुई िै, हिसका अथथ िै- योग करना या ि़ि़ोना। इसके उच्च अथथ में इसका मतलब िैिीवािा को परमािा से ि़ोना, अंि का समूपूणथ से एक िोना, मनुष्य का ब्र्ह्माण्ड में हवलय। यि एक उत्कृि हवज्ञान िै िो हवहभन्न लोकों,ं भौहतक, तारालोक, मानहसक बुन्दि, अन्तज्ञाथन आहद से सम्बि िै, और यि सभी में समन्वय लाता िै।

कई लोग ऐसा सोचते िैं हक योग व्यन्दि के सामान्य िीवन से हभन्न कुछ और िै अथवा यि उनसे सम्बन्दित िै हिन्होंने आि-साक्षात्कार अथवा ईश्वर-साक्षात्कार िेतु सांसाररक िीवन को त्याग हदया िै। लेहकन ऐसा निीं ं समझना चाहिए।

योगाभ्यास वतथमान समय की अहनवायथ आवश्यकता िै। कोई भी वि हवज्ञान िो व्यन्दि की आन्तररक ह्न्दियों ंके समन्वयपूणथ हवकास िेतु प्रेररत करे, िो िीवन की पूणथता िेतु प्रेररत करे और िो व्यन्दि को स्वास्थ्य, दीर्ाथयु, आनन्द, चहुाँओर सफलता, मानहसक सन्तुलन, िान्दन्त तथा अन्दन्तम रूप से अमरत्व प्रदान करे, वि योग किलाता िै।

सन्तुहलत हवकास, चहुाँओर सफलता, स्वास्थ्य एवं िीवन की पूणथता योग से प्राप्त िोने वाले मुख्य लाभ िैं।

हकसी भी योग की सािना हनयहमत तथा क्रमबि रूप से की िानी चाहिए तथा इसे सांसाररक प्रलोभनों ं से पूणथ हवरन्दि के साथ करना चाहिए।

योग कई प्रकार के िैं और ये व्यन्दि के व्यन्दित्व के हभन्न-हभन्न पिलुओं ंके हवकास में सिायता करते िैं। ठि योग और प्राणायाम स्वास्थ्य और िरीर की पूणथता की प्रान्दप्त िेतु सिायक िोते िैं। लेहकन स्वर योग िीवन के मूल रिस्यों ंकी गिराई में िाता िै और व्यन्दि को प्रत्येक कायथ में पथ-प्रदिथन करता िै तथा कई मामलों ंमें पूवथ से साविान भी करता िै।

ीविन में सफलता, सम्पहत्त का संग्रि तथा मानहसक ि ान्दन्त की प्रान्दप्त व्यन्दि के स्वास्थ्य और कमों पर
हनभथर ि ै। स्वर योग इन दोनों ंको ि ी हनयन्दित करता ि ै। यि भहवष्य में ि ोने वाले रोगों ंसे साविान करता
ैतिथा
व्यन्दि के भीतर हछपे रोगों ंकी अौहि भी बतलाता ि ै। यि नये कायथ के सम्पादन ि ेतु सिी समय भी बताता ि ै
हिससे उस कायथ में अहिकतम सफलता प्राप्त की ि ा सके। अतुः स्वर योग स्वास्थ्य एवं दीर्ाथयुष्य, सफलता और
सम्पहत्त, अनन्त ि ान्दन्त एवं अमरत्व का रिस्यमय हवज्ञान ि ै।

अध्याय ३
प्राण और इसके हवभाग

प्राण वि नाम िै, िो हवश्व के मूल आिार को प्रदान हकया गया िै, िो हक सभी हक्रयाकलापों ंऔर ऊिथ का अवलम्बन िै। िम िो वायु श्वास के साथ भीतर लेते िैं, प्राण इस वायु के साथ भीतर भ्रमण करता िै; लेहकन न तो यि वायु िै और न िी वि इसका कोई र्टक िै।

प्रत्येक बार भीतर ली गयी श्वास के साथ मनुष्य अपने संथथान में प्रचुर मात्रा में प्राण खींचंता िै। मात्र चूाँहक इसमें प्राणवायु िोती िै, इसहलए यि िीवन को अवलम्बन प्रदान निीं ंकर सकती, न िी इसके िारा यि थथूल भौहतक िरीर को बनाये रख सकती िै। इन कायों के हलए इसमें प्रचुर मात्रा में प्राण िोना चाहिए। यहद वायु में उपन्दथथत प्राणवायु इस थथूल भौहतक िरीर को बनाये रखने में सिायता और अवलम्बन प्रदान करती िै, तो वि इसमें उपन्दथथत प्राण के कारण। वि प्राण िो वैज्ञाहनकों ंकी पकि से बािर िै, वि सूक्ष्म िरीर तथा ज्ञानेन्दन्द्रयों ंको पोिण देता िै। हलंग िरीर िाक्टरों ंके परीक्षणों ंसे बािर िै।

रोग का मूल अहनवायथतः सूक्ष्म िरीर में िोता िै। इसी कारण हचहकत्सक इसकी पिचान करने में असमथथ रिते िैं। लेहकन प्राण सूक्ष्म चक्रों ंमें गिरे िा सकते िैं और रोग का इस प्रकार उपचार करके स्वास्थ्य के हनम्न स्तर को उठा कर उसके वास्तहवक स्तर पर ले आते िैं।

प्राण भौहतक िरीर के नािी-संथथान का पोिण करते िैं और मन िारा इसका उपयोग हकया िाता िै तथा संकल्प िन्दि और हवचार आहद िारा इसका उपभोग हकया िाता िै। यिााँ तक हक िमारी िारीररक हक्रयाओं, ं मांसपेहियों ंतथा अंगों ंके संचालन िेतु नािी िन्दि, िो हक प्राण िी िैं, के कुछ अंि की आवश्यकता िोती िै। इस तथ्य को दृहि में रखते हुए हक िम ब्रह्माण्ड से अपने प्राण की आपूहतथ श्वसन-संथथान िारा करते िैं- िमें यि िानना चाहिए हक िम अपने श्वसन-संथथान को हकस प्रकार स्वथथ रखें तथा यि हक हकस प्रकार प्राण िमारे कायों में सिायता करता िै और िमारे िरीर में हकस प्रकार पररभ्रमण करता िै।

नाहियााँ

नािी प्राण िेतु वािन िै। हिस प्रकार रि का संचरण छोटी तथा बिी रि-वाहिहनयों ंमें िोता िै, उसी प्रकार नाहियों ंिारा प्राण िमारे िरीर के हवहभन्न भागों ंमें ले िाया िाता िै।

मानव–रीर में ७२,००० नाहियााँ िैं। वे सूक्ष्म िरीर से सम्बन्दित िैं तथा िम उन्ें भौहतक नेत्रों ंसे निीं ं देख सकते। तो भी िम सूक्ष्म अन्तदृथहि िारा इन नाहियों ंमें प्राण के आवागमन का अनुभव कर सकते िैं। ये आन्तररक अथवा सूक्ष्म िरीर में व्याप्त िैं और प्राण के संचरण पर हनभथर िैं। उनका उद्भव नाहभ-क्षेत्र कन्द-थथान से िोता िै।

मूलािार चक्र में कुण्डहलनी, सपथ िन्दि के थथान पर एक नािी िै िो सपथ की भााँहत कुण्डली मारे हुए िै। यिााँ से २० नाहियों ंका उद्भव िोता िै। इनमें से दस ऊपर की ओर िाती िैं और दस नीचे की ओर।

यिााँ एक चक्र िै िो दस नाहियों ंसे हनहमथत िै। ये िैं-इिा, हपंगला, सुिुम्ना, गािारी, िन्दस्तहिह्वा, पूिा, अलमुबिा, कुह, िहकनी तथा िरदा।

उपरी दस में से इिा, हपंगला तथा सुिुम्ना अपने भीतर मरुत अथवा िीवन की श्वास ले कर िाती िैं।

सिुम्ना का पथ काल का पथ किलाता िै और यि ब्र्ह्मरन्ध् को िाता िै। ब्र्ह्मरन्ध् अथाथत् वि िार िो हचदाकाि अथवा ब्र्ह्मलोक, परम चेतना िो अिैत िै, को िाता िै।

पिूा तथा अलमुबिुा नेत्र से, गािारी तथा िन्दस्तहिह्वा कणथ से, िाहकनी पीहनयल ग्रन्दन्थ के ऊपर न्दथथत हछि से, कुह गुदा से तथा िारदा मुख से सम्बन्दित िै।

श्वास के हवभाग

मि श्वास लेने के िारा वायु के साथ हिस प्राण अथवा िीवन िन्दि को पुनः दस हवभागों ंमें बाँटा गया िै, लेहकन इनमें हवभाहित करने के बाद भी उसकी पूणथता बनी रिती िै। ये हवभाग िीव के हक्रयाकलापों ंके अनुसार हकये गये िैं हिनका संचालन िीव प्राण के िारा संचाहलत करता िै। ये िैं-प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान, नाग, कूमथ, कृकल, देवदत्त तथा िनंिय ।

प्राण इनमें सवोच्च िै और यि हनम्न अंगों ंमें कायथ करता िै-मुख सम्बिी क्षेत्र, नासा-रन्ध्रों,ं नाहभ तथा हृदय-कमल। यि ध्र्हन उच्चारण, श्वास, श्वास की अल्पता तथा कफ िेतु कारण िै।

अपान गुदा, हिश्न तथा उसके आसपास कायथ करता िै। यि िाँघों,ं अण्डकोि तथा नाहभ-गिुा के नीचे के भाग में भी हवचरण करता िै। यि िाँघों,ं अण्डकोि में तथा नाहभ-गिुा के नीचे स्पन्दन्दत िोती िै। यि िरीर के भागों ंतथा ऊपरी अंगों ंको सहक्रय करता िै तथा मूल-मूत्र के हवसिथन तथा बाह्य हनष्कासन में सिायता करता िै।

िि कायथ प्राण और अपान अपने सम्बन्दित क्षेत्रों ंमें सम्पाहदत निीं ंकरते, उनका हनयिण व्यान करता िै। यि नेत्रों,ं कणथ, कमर, नासा-रन्ध्रों ंतथा गुप्तांग-क्षेत्र में हवचरण करता िै।

समान समूपूणथ िरीर में व्याप्त रिता िै तथा यि समस्त ७२,००० नाह़ियों ंमें पररभ्रमण करता िै और अपने साथ िठराहि ले कर िाता िै। यि मनुष्य िारा ग्रिण हकये गये भोिन के पाचन में तथा हलये गये समूपूणथ भोिन के उपयोग में सिायता करता िै। उदान का कायथक्षेत्र सभी िोि एवं गला िै। यि हवहभन्न अवयवों ंको कायथ करने में सिायता करता िै।

नाग वाणी पर हनयिण करता िै, िब हक कूमथ पलक झपकने िेतु उत्तरदायी िै। कृकल भूख और प्यास का कारण िै। देवदत्त हवस्तार िैसे–िंभाई आहद से सम्बन्दित िै। िनंिय कान बन्द करने पर भी िो ध्र्हन सुनायी देती िै, उसका कारण िै।

िरीर की स्वच्छता

ऊपर िमने देखा हक प्राण के िमारे प्रत्येक हक्रयाकलाप से िुिे िोने के गुण के कारण प्राण का उहचत प्रकार से कायथ करना हकतना मित्त्वपूणथ िै। इसहलए िमें इस भौहतक तथा सूक्ष्म िरीर को सदैव स्वच्छ रखना चाहिए तथा नाह़ियों ंमें प्राण के प्रवाि में सिायता करनी चाहिए, अन्यथा इनसे सम्बन्दित कायों में बािा प़िेगी और िरीर रोगी िो िायेगा।

प्राण की सिायता से िरीर और मन को स्वच्छ रखने की कला तीन अवथथाओं–ंपूरक, रेचक और कुम्भक से हनहमथत िै।

प्रारम्भ करते समय इडा नाड़ी (चन्द्र नाड़ी, बायाँ नासा-रन्ध्र) से श्वास भीतर लें और पिंगला नाड़ी (सूर्य नाड़ी अथवा दाहिना नासा-रन्ध्र) से श्वास बाहर छोड़ें। सर्वप्रथम यह अभ्यास दिन में तीन बार-प्रातः, मध्याह्न एवं सायंकाल एक माह तक करें। इसे २० बार से धीरे-धीरे १०० बार तक दिन-प्रतिदिन बढ़ायें । प्रत्येक बार १०० तक हो जाने पर आगे बढ़ना है। एक माह तक मात्र यही अभ्यास करना है।

पद्मासन में बैठ कर उड्डियान बंध लगायें। पूर्ण रूप से श्वास बाहर निकाल दें। किसी प्रकार की आवाज न करें और न ही बलपूर्वक करें। श्वास को बाहर निकालते समय धीरे-धीरे बिना झटके के रेचक करें और लक्ष्य पाँचवाँ निलय अथवा सोलहवीं कला को रखें। यह रेचक है। यह सभी पापों को भस्मीभूत करता और आकर्षक व्यक्तित्व प्रदान करता है।

पूरक का अर्थ है-भरना। पूरक करते समय श्वास भीतर लेते हुए सम्पूर्ण शरीर को जीवन अथवा जीवन शक्ति से भरना चाहिए। यह ध्यान रखें कि इस क्रिया में शरीर का प्रत्येक अंग प्राण अथवा जीवन शक्ति से परिपूर्ण हो जाये। पूरक भी बिना शीघ्रता के, बिना झटके के किया जाना चाहिए।

पूरक तब तक किया जाना चाहिए, जब तक हमें सिर के शीर्ष में इसका अनुभव होने लगे। यह पौरुष, साहस, शक्ति, वृद्धि, पूर्णता तथा व्यक्तित्व में दिव्य कान्ति प्रदान करता है।

इसके पश्चात् तीसरी क्रिया है-ली गयी श्वास को रोक कर रखना। शरीर को हिलाये-डुलाये बिना श्वास को रोकने का प्रयत्न करें। इसे कुम्भक कहते हैं। यदि आपको कष्ट होने लगे, तो बिना किसी भय अथवा चिन्ता के श्वास को धीरे-धीरे बाहर निकाल दें। श्वास भीतर रोकने में अपनी संकल्प शक्ति का प्रयोग करें। कुम्भक के समय निरन्तर श्वास भीतर ले कर बल-प्रयोग न करें। कुम्भक से शरीर के भीतर उपस्थित समस्त विष जल जाते हैं, भोजन का पाचन होता है तथा यह सभी दुर्गुणों का नाश करता है।

कुम्भक का अभ्यास दूसरे माह से प्रारम्भ करना चाहिए, इससे पूर्व नहीं। सम्पूर्ण प्रथम माह श्वास भीतर लेने (पूरक) और बाहर छोड़ने (रेचक) में ही लगाया जाना चाहिए। इससे नाड़ियाँ शुद्ध होती हैं और कुम्भक हेतु तैयार हो जाती हैं।

प्राणायाम हेतु नियम

जो प्राणायाम का अभ्यास करते हैं, उन्हें अपने गुरु से प्राप्त निर्देशों के साथ-साथ निम्न नियमों का पालन करना चाहिए :

१. सात्त्विक आहार लें जिसमें मिर्च, नमक, खट्टे तथा तीखे पदार्थ न हों।

२. शराब, मांस, तम्बाकू आदि से परहेज रखें तथा ब्रह्मचर्य का पालन करें।

३. कभी भी ठण्डे पानी से तथा नदी अथवा तालाब में स्नान न करें। गुनगुने पानी से स्नान करें। चूँकि प्राणायाम से आन्तरिक रूप से अत्यधिक उष्मा उत्पन्न होती है; इसलिए ठण्डे पानी से स्नान करने पर सर्दी-खाँसी हो सकती है।

४. कुम्भक का अभ्यास सामान्यतया प्रातःकाल शीघ्र एवं सन्ध्या को करना चाहिए, जब वातावरण सामान्यतया शीतल होता है।

५. यि अहिक अच्छा ि◌ोगा, यहद प्राणायाम का अभ्यास नदी के हकनारे, बगीचे में अथवा योहगयों ◌ंि◌ारा बताये गये एकान्त थथान में हकया ि◌ाये।

६. प्राणायाम का अभ्यास तब करना चाहिए, ि◌ब ि◌ि◌ु और तिी वायु बि री ि◌ो तथा यि ि◌ि◌र के प्रदूिण से मिु ि◌ो, अन्यथा आप अपने संथथान में वायु में उपन्दथथत अिुन्दियों ◌ंको लेंगे।

अध्याय ४
सूयथ, चन्द्रमा एवं अहि

हपछले अध्याय में ि◌मने श्वास तथा नाहियों ◌ंके हवहभन्न हवभागों ◌ंको देखा। नाहभ से ऊपर की ओर ि◌ाने वाली दस नाहियों ◌ंमें से तीन सवाथहिक मित्त्वपूणथ ि◌ैं-इिा, हपंगला तथा सिुम्ना। दीघाथयु और ि◌ान्दन्त से पूणथ स्वथथ िीवन ि◌ीना, ि◌ो ि◌में अमरत्व प्रदान करता ि◌ै, वि इन तीनों ◌ंनाहियों ◌ंमें श्वास के प्रवाि की प्रकृहत तथा हिस लय और ििसिता से श्वास प्रवाहित ि◌ोती ि◌ै, उस पर हनभथर करता ि◌ै।

इिा अथवा चन्द्र नािी बायें नासा-रन्ध् में श्वास के प्रवाि से पिचानी ि◌ाती ि◌ै तथा हपंगला अथवा सूयथ नािी दाहिने नासा-रन्ध् में श्वास के प्रवाि से पिचानी ि◌ाती ि◌ै।

ये दोनों ंनाहड़याँ बारी-बारी से कायथ करती िैं। एक निाड़ी से दूसरी निाड़ी में प्रवाि के पररवतथन के समय को हववुत् किते िैं। पररवतथन का यि समय ब्िा िी अिुभ िोता िै। हववुत् के समय कोई भी अच्छा अथवा बुरा कायथ निीं ंकरना चाहिए।

प्रवाि-पररवतथन के समय यहद नयी निाड़ी में कोई अवरोि िोता िै, तो स्वाभाहवक रूप से यि अवरोिक पदाथथ बलपूवथक बािर आता िै और िलके अथवा िोर से छीकं िोती िै और वि नासा-रन्ध्र स्वच्छ िो िाता िै। इसी कारण छीकं को अिुभ मानते िैं; क्ोंहक यि हववुत् की ओर संकेत करती िै।

दोनों ंनाहड़यों ंमें से प्रत्येक बारी-बारी से एक-एक ण्टा अथवा ढाई र्टका तक कायथ करती िै। यि क्रम सूयोदय से प्रारम्भ िोता िै।

इडा तथा हपंगला संवेदना की कहड़याँ निीं ंिैं। भौहतक िरीर में ये प्रायोहगक रूप से बायीं ंऔर दायीं ं संवेदनिाक शृंखलाओं ंके सदृि िैं।

इडा दाहिने अण्डकोि से तथा हपंगला बायें अण्डकोि से प्रारम्भ िोती िै। ये मूलािार में िा कर सुषुम्ना में हमलती िैं और एक ग्रन्थि बनाती िैं। इन तीनों ंनाहड़यों ंके हमलन-थथल को मुक्तहत्रवेणी किा िाता िै। गंगा, यमुना और सरस्वती क्रमिः हपंगला, इडा तथा सुषुम्ना में हमलती िैं। इनके हमलन-थथल को ब्रह्म ग्रन्थि किा िाता िै। ये अनाित चक्र तथा आज्ञा चक्र में पुनः हमलती िैं।

सुषुम्ना

हिन तीन मुख्य नाहड़यों ंके बारे में िम हवचार कर रिे िैं, उनमें से सुषुम्ना सवाथहिक मित्त्वपूणथ िै। िब श्वास का प्रवाि प्रत्येक श्वास के पश्चात् दोनों ंनासा-रन्ध्रों ंमें िीघ्र पररवहतथत िो, तो उसे सुषुम्ना किते िैं। यि सभी कायों के हलए अिुभ िोती िै। प्रवाि की इस न्थथहत को हववुत् अथाथत् सभी कमों को नि करने वाली किते िैं।

यि मन के हवचलन अथवा हवक्षेप, बेचैनी, िीघ्रता, अन्थथरता, दुहविा तथा िरीर की दोषपूणथ न्थथहत को बताती िै। इस न्थथहत में व्यन्ति को सलाि दी िाती िै हक वि हवश्राम करे और मन का सन्तुलन प्राप्त करे। इस समय कोई भी कायथ निीं ंकरना चाहिए; क्ोंहक यि इस बात का संकेत िै हक मन अपने लक्ष्य पर न्थथर अथवा दृढ़ निीं ंिै तथा मन में संिय अथवा दुहविा िै। िल्दबािी में हकये गये कायथ पर सदैव बाद में पछताना पड़ता िै।

एक दूसरी प्रकार की सुषुम्ना भी िै हिसमें श्वास का प्रवाि दोनों ंनासा-रन्ध्रों ंसे हनरन्तर िोता रिता िै। इसे एक और तरीके से भी पिचाना िाता िै। इसमें हबना झटके के एक-समान प्रवाि िोता रिता िै और मन की एकाग्रता षट् चक्रों ंमें से हकसी एक पर केन्न्द्रत िोती िै।

सुषुम्ना के समय ईश्वर की िारणा और ध्यान करने का बहुत िी अच्छा सुअवसर िै; क्ोंहक इस समय मन स्वाभाहवक रूप से िान्त और न्थथर िोता िै। इस समय कोई अन्य कायथ निीं ंकरना चाहिए।

सुषुम्ना में श्वास के प्रवाि को हनरन्तर बनाये रखना अत्यन्त कहठन िै; इसहलए यहद थोड़े समय के हलए भी सुषुम्ना का प्रवाि िो, तो उसका सदुपयोग अच्छे कायथ िेतु हकया िाना चाहिए।

नाड़ियों ंके लक्षण

इडा ीतल ै और हपंगला उष् ै। हपंगला भोिन का पाचन करती ै। इडा पीले रंग की िन्दि रूपा ै। हपंगला लाल रंग की रुि रूपा ै। इडा और हपंगला काल को बताती ैं, िब हक सुिम्ना काल का भक्षण करती ै। इडा में श्वास अमृत की भाँहत ोती ै। यि संसार की मान् पोिक ै। ुक्ल पक्ष में इडा िन्दिली ोती ै तथा कृष् पक्ष में हपंगला। दायें भाग में सदैव संसार का िन्म ोता ै।

चन्द्र नाड़ी को स्त्रीहलंग की तरि माना िाता ै। यि काले रंग तथा राहि-चक्र के न्दथथर हचह्नों ंसे संयुि ै। सूयथ नाड़ी को पुन्दल्लंग की तरि माना िाता ै तथा यि श्वेत रंग और राहि-चक्र के चलायमान हचह्नों ंसे संयुि ै। अहि नाड़ी (सुिम्ना) को नपुंसक माना िाता ै तथा यि राहि-चक्र के सामान्य प्रतीकों ंसे संयुि ै।

चन्द्र नाड़ी का प्रभाव पहश्चमी तथा दहक्षणी भागों ंपर ोता ै। सूयथ नाड़ी पूवी और उत्तरी भागों ंपर प्रभाव िालती ै।

चन्द्र अथवा इडा तृतीय हनलय के ठीक ऊपर ै तथा सूयथ अथवा हपंगला सूयथ ति के ठीक नीचे ै।

िब प्राण स्वतः सुिम्ना में प्रवाहित ोते ैं, तो व्यन्दि बाह्य िगत् को भूल िाता ै। यि समाहि ेतु तैयारी ै और यि सवथश्रेष्ठ ै।

काल पर हविय

वि मनुष्य िो तीनों ंनाड़ियों ंपर हनयंिण करने में प्रवीण ै तथा िो सुिम्ना में प्राण को न्दथथर कर सकता ै, वि मन को िु कर लेता ै और ऐसा मनुष्य ी काल पर हविय प्राप्त कर लेता ै।

वि मनुष्य हिसने इस प्रकार प्राण को सुिम्ना में न्दथथर कर हलया ो, उसे इसे ब्रह्मरन्ध्र की ओर ले िाने का प्रयत्न करना चाहिए। तभी वि समाहि अथवा परम चेतनावथथा का अनुभव कर सकेगा।

योगी को अपनी मृत्यु के समय का ज्ञान ोता ै। वि इस समय अपने प्राणों ंको सुिम्ना में ले िाता ै और यााँ से उन्ें ब्रह्मरन्ध्र में ले िाता ै तथा काल या मृत्यु पर हविय पा लेता ै।

मृत्यु अथवा समय को काल किते ैं। बहुत-सी र्टनाएँ काल से ोती ैं। इसहलए इसे 'कालयहत इहत काल:' किते ैं। िन्म तथा मृत्यु काल में ी ैं। समय का अहतक्रमण करना अथाथत् अमरत्व-प्रान्दप्त ेतु िन्म तथा मृत्यु से परे ोना।

सूयथ तथा चन्द्र-ये दोनों ंनाड़ियााँ समस्त प्राहणयों ंके हलए हदन तथा राहत्र का हनिाथरण करती ैं। िब वे कायथ करती ैं, तो हदन-रात एक के बाद एक करके आते–िाते ैं और इस प्रकार िीवन समाप्त ो िाता ै। प्रत्येक बार िब आप श्वास बािर छोड़ते ैं, आप ४ अंगुल श्वास खो देते ैं; क्योंहक श्वास भीतर लेते समय आप ८ अंगुल श्वास भीतर लेते ैं, िब हक छोड़ते समय १२ अंगुल श्वास बािर हनकालते ैं। नश्वरों ंमें मुख्यतः चन्द्र नाड़ी कायथ करती ै। चन्द्र नाड़ी के प्रवाि पर हनयंिण करके व्यन्दि अहिक ी सकता ै। दोनों ंी नाड़ियों ंसूयथ, चन्द्र हपंगला और इडा के प्रवाि को रोकने के िारा व्यन्दि बहुत अहिक काल तक िीहवत रि सकता ै।

सुिम्ना काल का भक्षण करती ै। यि मिान् यौहगक रिस्य ै। श्वास को सुिम्ना में रोक कर व्यन्दि उत्तम स्वास्थ्य का उपभोग करता ै और

अपने ीवन-काल में अनन्त काल तक की वृन्दि कर लेता ै। श्वास को सुिम्ना से िीथ में ले ाने के ारा व्यन्दि अमरत्व को प्राप्त करता ै और अमृत का पान करता ै।

बि आप मृत्यु से बचना चिाते ों, ं तो अपनी श्वास को सुिम्ना में रोके रिं। मृत्यु आपसे दूर चली ायेगी।

इस प्रकार आप मृत्यु से बच सकते ैं और अच्छे स्वास्थ्य का उपभोग कर सकते ैं तथा अपने ीवन में अनन्त काल की वृन्दि कर सकते ैं।

अध्याय ५

स्वर हवज्ञान

मिारे स्वथथ िीवन एवं गहतहवहि िेतु इिा, हपंगला और सुिम्ना नाहड़यों ंमें श्वास का प्रविा हििवे मित्त्व रखता िै। इस अध्याय में िम उपरिो नाहड़यों ंमें श्वास के प्रविा से सम्बन्दित कुछ और तथ्यों ंके बारे में पढ़ेंगे।

स्वर (प्रविा) की अवहि

इिा और हपंगला-दोनों ंमें से प्रत्येक सूयोदय से प्रारम्भ िो कर एक र्णटे (ढाई र्हटका) की अवहि तक चलती िै। इस प्रकार एक हदन (२४ र्णटे) में श्वास १२ बार इिा से प्रवाहित िोती िै और १२ बार हपंगला से। यि श्वास और नाहड़यों ंकी सामान्य हक्रया और साथ िी अचेछे स्वास्थ्य को भी इंहगत करती िै।

सामान्यतया िब व्यन्दि िारीररक अथवा मानहसक कायों में व्यस्त रिता िै, तो सुिम्ना निीं ंचलती िै। सुिम्ना मात्र तभी चलती िै, िब मन एकाग्र िोता िै और अपनी गुप्त वृहत्तयों ंिारा हनयन्दित िोता िै। यहद इसके हवपरीत प्रकार की सुिम्ना (झटके के साथ तेिी से श्वास के प्रविा में पररवतथन) उस समय चले, िब व्यन्दि का मन ध्यान करने की न्दथथहत में न िो तथा वि िाग्रत अवथथा में िो, तो यि श्वास के प्राकृहतक प्रविा में हकसी बािा का सूचक िै।

स्वथथ प्रविा (स्वर)

इिा और हपंगला में श्वास के प्रविा को हनयन्दित करने वाले हनयमों ंके साथ-साथ चन्द्र हदवस भी नाहड़यों ंके कायथ को प्रभाहवत करते िैं; लेहकन इनसे उनकी अवहि में पररवतथन निीं ंिोता।

इससे यि समझ में आता िै हक चन्द्रमा मानव-मन पर बिुत िी िन्दिाली प्रभाव िालता िै। पुरुिसूि में हलखा िै: "चन्द्रमा मनसो िातः" -चन्द्रमा मन से (हवराट् पुरुि के मन से) िन्मा िै। ब्रह्माण्ड में चन्द्रमा हवराट् पुरुि के मन से हनयन्दित िै। िीविा का मन हवराट् पुरुि के मन का सूक्ष्म अंि िै; इसहलए चन्द्रमा का मन के साथ सम्बि िै। इस कारण िीविा स्वयं को चन्द्रमा िारा हनयन्दित अनुभव करता िै।

िब चन्द्रमा बढ़ता और र्टता िै, तो इसका मन से सम्बि भी र्टता-बढ़ता रिता िै और इस प्रकार मन में एक संवेदनिाक प्रहतहक्रया उत्पन्न िोती िै। इसी कारण श्वास के प्रविा और चन्द्र हदवस के मध्य सम्बि िै।

िुक्ल पक्ष के प्रथम हदन इिा या चन्द्र नािी या बायााँ स्वर (बायें नासा-रन्ध् से श्वास का प्रविा) प्रारम्भ िोता िै और यि प्रत्येक र्णटे पश्चात् इिा से हपंगला (दाहिना स्वर) और हपंगला से इिा में बदलता रिता िै। यि क्रम तीन हदनों ंतक हनरन्तर इसी प्रकार चलता रिता िै। चौथे हदन (िुक्ल पक्ष की चतुथी) सूयोदय के समय हपंगला नािी (दाहिना स्वर) या सूयथ नािी से श्वास का प्रविा प्रारम्भ िोता िै और ऊपर बताये अनुसार इसमें क्रमिः पररवतथन िोता रिता िै। इस प्रकार प्रत्येक पक्ष के चौथे हदन प्रातुःकाल स्वर में पररवतथन िोता िै। यहद हकसी हदन प्रातुःकाल इिा नािी अथवा बायााँ स्वर चले, तो इसके चौथे हदन आप देखेंगे हक प्रातःकाल सूयोदय के समय दायााँ स्वर अथवा हपंगला नािी चलेगी।

कृष् पक्ष में न्दथथहत इसके ठीक हवपरीत िोगी। कृष् पक्ष की प्रथमा को सूयोदय के समय दायााँ स्वर अथवा हपंगला नाड़ी चलेगी तथा प्रत्येक र्ण्टे से यि ऊपर बताये अनुसार बदलता रिता िै और चौथे हदन से सूयोदय के समय इडा नाड़ी अथवा बायााँ स्वर चलता िै।

संक्षेप में इडा और हपंगला का प्रवाि हनम्नानुसार िोता िै :

िुक्ल पक्ष में इडा हनम्न हतहथयों ंको सूयोदय के समय चलती िै- प्रथमा, हितीया, तृतीया, सप्तमी, अिमी, नवमी, त्रयोदिी, चतुदथिी एवं पूहणथमा।

कृष् पक्ष में इडा हनम्न हतहथयों ंको सूयोदय के समय चलती िै- चतुथी, पंचमी, ििी, दिमी, एकादिी तथा िादिी।

हपंगला हनम्न हदनों ंमें सूयोदय के समय से प्रारम्भ िोती िै :

कृष् पक्ष-प्रथमा, हितीया, तृतीया, सप्तमी, अिमी, नवमी, त्रयोदिी, चतुदथिी और अमावास्या ।

िुक्ल पक्ष-चतुथी, पंचमी, ििी, दिमी, एकादिी और िादिी।

उपरोक्त प्रकार से यहद नाड़ी का प्रवाि िोता िै, तो यि स्वथथ मनुष्य के श्वास के स्वाभाहवक और प्राकृहतक प्रवाि को इंहगत करता िै। यहद न्दथथहत इसके हवपरीत िै, तो यि िरीर में हकसी दोष की ओर संकेत करता िै। ये दोष अथवा रोग हवकहसत िों ंऔर गम्भीर रूप लें, इससे पिले िी इन्ें श्वास का प्रवाि (स्वर) बदल कर ठीक हकया िा सकता िै। यि कायथ हबना औषहधयों ंकी सिायता के प्राण के सियोग से हकया िाता िै।

स्वर का मित्त्व

सूयोदय के समय इडा नाड़ी अथवा बायााँ स्वर चलना तथा सूयाथस्त के समय हपंगला नाड़ी अथवा दायााँ स्वर चलना िुभ िै। यहद स्वर इसके हवपरीत चले, तो अस्वथथता और िाहनकारक पररणाम िोते िैं।

यहद सारे हदन इडा चले और सारी रात हपंगला, तो यि मनुष्य को मिान् योगी बनाती िै।

यहद िुक्ल पक्ष में सोमवार, बुधवार, गुरुवार और िुक्रवार को चन्द्र नाड़ी अथवा बायााँ स्वर चले, तो सभी कायों में सफलता हमलती िै।

इसी प्रकार कृष् पक्ष में रहववार, मंगलवार और िहनवार को सूयथ नाड़ी अथवा दायााँ स्वर चल रिा िो, तो यि चतुहदथक् सफलता का द्योतक िै।

हनम्न स्वर भी अच्छे िैं िैसे प्रात:काल एवं मध्याह्न में इडा (बायााँ स्वर) तथा सन्ध्याकाल में हपंगला नाड़ी (दायााँ स्वर) का चलना ।

पुनः इडा और हपंगला में श्वास का प्रवाि पूवथ हदिा में उहदत िोने वाली राहियों ंसे सम्बन्धित िै। िब वृषभ, ककथ, कन्या, वृहश्चक, मकर, मीन राहियााँ पूवथ में उहदत िों,ं तो इडा (बायााँ स्वर) चलना श्रेष्ठ िै और िब िेष छि राहियााँ पूवथ में उहदत िों,ं तो हपंगला (दायााँ स्वर) चलना श्रेष्ठ िै।

स्वर-पररवतथन

ऊपर िुभ तथा अिुभ स्वरों ंके बारे में बताया गया िै, हिससे हक व्यन्दि उहचत स्वर को चला कर अपने सभी कामों ंमें सफलता प्राप्त कर सके। इस िेतु स्वर-पररवतथन की हवहभन्न हवहियााँ िानना आवश्यक िै। इनमें से कुछ हनम्न िैं :

१. हिस नासा-रन्ध् में श्वास का प्रवाि बन्द करना िो, उसे नरम रुई की गोली से बन्द कर दें। िैसे यहद आपका बायााँ स्वर चल रिा िो और आप दायााँ स्वर चलाना चािते िैं, तो आप बायें नासा-रन्ध् को रुई की गोली िाल कर उसे बन्द कर दें। थोिी देर बाद आपका स्वर बदल िायेगा। दायें स्वर के हलए इसके हवपरीत करें।

२. हिस नासा-रन्ध् में श्वास का प्रवाि िो रिा िो, उसे अाँगूठे से बन्द कर दें। कुछ देर पश्चात् श्वास का प्रवाि अन्य नासा-रन्ध् से िोने लगेगा।

३. िब इडा (बायााँ स्वर) प्रवाहित िो रिा िो, सुखासन अथवा पद्मासन में बैठ कर बायीं ंिथेली को भूहम पर रखें और बायीं ंकोिनी को पसहलयों ंके ठीक नीचे बायीं ंओर िलके दबाव से दबायें। इससे श्वास का प्रवाि बायें नासा-रन्ध् से दाहिने नासा-रन्ध् में िोने लगेगा। ऐसा िी हपंगला के प्रवाि के समय भी करें। बस, उस समय दायें िाथ को भूहम पर रख कर दायीं ंकोिनी से दबाव िालना िोगा।

४. आप योगदण्ड (यि लगभग िाथ-भर लम्बा िोता िै और इसका ित्था 'यू' के आकार का िोता िै) का भी प्रयोग कर सकते िैं। अपनी बगल से थोिा नीचे योगदण्ड के 'यू' के आकार वाले भाग से थोिा दबाव िालें और थोिा उस ओर झुकें। श्वास का प्रवाि दूसरी ओर से िोने लगेगा। यिी कायथ लम्बे दण्ड से या चलते हुए अथवा खिे रि कर हकया िा सकता िै।

५. मन को भी स्वर-हनयिण िेतु प्रहिहक्षत हकया िा सकता िै। हिस प्रकार मात्र मन के हवचार से िरीर की पेहियों ंको हनयन्दित करते िैं, उसी प्रकार एक नासा-रन्ध् से दूसरे नासा-रन्ध् में स्वर का प्रवाि भी पररवहतथत हकया िा सकता िै।

६. यहद आप बायीं ंकरवट लेट िायें, तो दायााँ स्वर चलने लगेगा और यहद आप दायीं ंकरवट लेट िायें, तो बायााँ स्वर चलने लगेगा।

िब भी आवश्यकता िो, आपको स्वर-पररवहतथत कर लेना चाहिए।

सुिुम्ना के प्रवाि को पररवहतथत करना थोिा कहठन िै और इसमें प्रवाि को हनरन्तर बनाये रखना भी कहठन िै।

सुिुम्ना नािी में श्वास-प्रवाि

हकसी भी नािी का प्रवाि सुिुम्ना में पररवहतथत करने िेतु हनम्न हवहियााँ सिायक िोंगी :

१. पीठ के बल भूहम पर लेट िायें। तहकये का प्रयोग न करें। नाहसका के अग्रभाग अथवा भ्रूमध्य (हत्रकुटी) पर ध्यान करें। सुिुम्ना चलने लगेगी।

२. सुखासन, पद्मासन अथवा हसिासन में मेरुदण्ड सीिा रख कर बैठें। कुछ चक्र भन्दस्त्रका करें। ऊपर बताये अनुसार ध्यान का अभ्यास करें। सुिम्ना प्रवाहित िोने लगेगी।

३. ट्ि् चक्रों ंमें से हकसी एक पर िारणा करने से भी सुिम्ना के प्रविा मैं सिायता हमलती िै।

मेरुदण्ड एकदम सीिा और न्दथथर िोना, ध्यान की तीव्रता तथा हवचारों ंमें न्दथथरता-ये तीनों ंिी सुिम्ना में श्वास के प्रविा को सुहनहश्चत करते िैं। ये तीनों ंिी मात्र इस प्रविा को हनरन्तर बनाये रखने में सिायक िैं। यहद उपरिो तीनों ंमें से एक भी बाहित िो, तो श्वास बायें अथवा दायें नासा-रन्ध् से प्रवाहित िोने लगती िै।

स्वर का उपयोग

सूयथ नािी के प्रविा के समय िन्दि, िीवन िन्दि और अच्छा पाचन सुहनहश्चत िोता िै। चन्द्र नािी के समय पाचन तो िोता िै; लेहकन संथथान में हवि बनता िै। सुिम्ना मोक्ष की दाता िै।

सोते समय बायीं ंकरवट लेटने से सूयथ नािी कायथ करती िै और मन को पूणथ हवश्राम प्राप्त िोता िै; क्ोंहक चन्द्र नािी को इस समय हवश्राम हमल िाता िै। यहद सोते समय चन्द्र नािी काम करे, तो हनिा बाहित िोती िै और स्वप्न हदखायी देते िैं।

हिता नािी (हिसमें मन गिन हनिा के समय हवश्राम करता िै) थोिी बायीं ंओर िै और मनुष्य की हनिा के समय चन्द्र नािी के प्रविा से इसमें बािा पिती िै, तो स्वप्न हदखायी देते िैं। इसहलए इसमें सोते समय रुकावट निीं ंआनी चाहिए।

इसहलए आपको सदैव बायीं ंकरवट सोना चाहिए, हिससे सूयथ नािी (दायाँ स्वर) काम करें। इस प्रकार आपको दो लाभ प्राप्त िोंगे गिरी नीदं तथा आदिथ पाचन, हिससे आपको स्वास्थ्य, िन्दि तथा स्फूहतथ प्राप्त िोगी।

यहद आप दायीं ंकरवट सोयेंगे, तो आप अपने हनम्न मन को िाग्रत रख कर अपनी चेतना को िाग्रत रख सकते िैं। लेहकन ऐसा आप तभी कर सकते िैं, िब आप मन के हवचलन और कामनाओं ंसे मुि िोंगे और तब आपको हनश्चय िी कोई स्वप्न निीं ंआयेगा।

िब आप व्यन्दिगत अथवा समाि के कल्याण िेतु हकसी कायथ का आरम्भ करें, तो यि ध्यान रखें हक उस समय इडा (बायाँ स्वर) चल रिी िो। ऐसे कुछ कायथ नीचे हदये िा रिे िैं :

िीवन के नये क्षेत्र में प्रवेि करना, िास्त्रीय अध्ययन प्रारम्भ करना, यात्रा प्रारम्भ करना; हमत्रों,ं सम्बन्दियों ं तथा वररष्ठ िनों ंसे हमलना, भवन और मन्दन्दर का हनमाथण-कायथ प्रारम्भ करना, कृहि-कायथ प्रारम्भ करना, नयी हनयुन्दियाँ लेना, हववाि, नवीन वस्त्र, आभूिणों ंको िारण करना, पौहिक औिहियों ंका हनमाथण-कायथ प्रारम्भ करना।

सूयय नाडी : िब आप रािहसक अथवा तामहसक देवताओं ंसे सम्बन्दित मि िास्त्र (काला िादू) का अध्ययन प्रारम्भ करें, भोिन तथा स्नान करें, उस समय सूयथ नािी (दाहिना स्वर) चलनी चाहिए।

संक्षेप में वे कायथ िो थथायी रूप से अच्छे फल प्रदान करें, उन्ें इिा (बायाँ स्वर) के प्रविा के समय प्रारम्भ करें तथा वे सभी कायथ िो प्रकृहत में क्षहणक तथा अथथायी िो, उन्ें सूयथ नाड़ी (दायाँ स्वर) चल रिी िो, तब प्रारम्भ करें।

सुिुम्ना को सदैव आध्यान्दिक कल्याण, िारणा एवं ध्यान तथा कुम्भक िेतु आरहक्षत रखना चाहिए।

नोट : इिा और हपंगला के समय हकये िाने वाले कायों की सूची पुस्तक में आगे दी गयी िै।

अध्याय ६
तत्त्व

यि सृहि तीन गुणों (सत्त्व, रि और तम) एवं पंच तत्त्वों की लीला मात्र िै। पंच तत्त्व िैं—पृथ्वी, िल, अहि, आकाि और वायु। ब्रह्म लोक से ले कर पृथ्वी लोक तक प्रत्येक वसुतु उपरि तीनों गुणों तथा पंच तत्त्वों से हनहमथत िै।

हवहभन्न लोकों के मध्य मात्र नाहड़यों में हभन्नता िोती िै। प्रत्येक बार श्वास भीतर लेने और बािर छोड़ने की हक्रया के साथ-साथ इन तत्त्वों में भी बदलाव आता िै। तत्त्वों की गहतहवहियों में हििेष सूक्ष्म अन्तदृथहि के साथ स्वरों का अच्छा ज्ञान व्यन्दि को मोक्ष की ओर ले कर िाता िै। तहमल में एक किावत िै- **"सारं पारप्पान परं पारप्पान"**, हिसका अथथ िै- "वि िो तत्त्वों के पररवतथन को अच्छी तरि देखता िै तथा सृहि के क्षेत्र में उनके हवहभन्न प्रभावों को िानता िै, वि परमािा को देखता िै।"

पंच तत्त्व

पृथ्वी : पृथ्वी तत्त्व का थथान ि मूलाार चक्र। इसका रंग पीला ि। इसकी तन्मात्रा ि गि। नाहसका ज्ञानेन्दन्द्रय तथा गुदा कमेन्दन्द्रय इससे सम्बन्दित ि। िब यि तत्त्व अहिक िो िाता ि तो पीहलया, मानहसक हवकलांगता, भय आहद रोग उत्पन्न िोते ि। इसका बीाक्षर ि 'ल'।

जल : इसका थथान ि स्वाहिष्ठान्न चक्र। यि िननेन्दन्द्रय के मूल में न्दथथत ि। यि श्वेत रंग का ि। यि हिह्वा ज्ञानेन्दन्द्रय तथा िनन इन्दन्द्रयों ंकमेन्दन्द्रय से सम्बि ि। इस तत्त्व की वृन्दि से भ्रम, अचेतनता आहद उत्पन्न िोते ि। इस तत्त्व का बीाक्षर ि 'वं'।

अडि : अहि तत्त्व का थथान ि महणपूर चक्र, िो नाहभ में न्दथथत ि। यि तत्त्व लाल रंग का ि। यि चक्षुषु ज्ञानेन्दन्द्रय तथा पैर कमेन्दन्द्रय से सम्बि ि। क्रोि, िरीर की गि आहद इससे सम्बन्दित ि। इस तत्त्व का बीाक्षर ''ि।

वायु : वायु तत्त्व का थथान अनित चक्र ि, िो हृदय-कमल में न्दथथत ि। यि िरा अथवा नीले रंग का ि। इसकी तन्मात्रा अथवा गुण स्पिथ ि। यि त्वचा ज्ञानेन्दन्द्रय तथा िाथ कमेन्दन्द्रय से सम्बन्दित ि। इस तत्त्व के असनुतुलन से अथथमा, टी.बी. आहद रोग िोते ि। इस तत्त्व का बीाक्षर ि 'यं'।

आकाि: इसका थथान ि गले में न्दथथत हवुिन्दि चक्र। काला रंग अथवा काले िबे्बे इसका रंग ि। कुछ लोग ऐसा मानते ि हक इसका रंग गिरा नीला ि। इसकी तन्मात्रा 'िब्द' ि। यि कणथ ज्ञानेन्दन्द्रय तथा हिह्वा कमेन्दन्द्रय से सम्बि ि। इसका बीाक्षर 'ि' ि।

तत्त्वों ंपर ध्यान

हवहभन्न तत्त्वों ंमें अवरिो अथवा गिबिी के कारण िो हवहभन्न दोि और रोग उत्पन्न िोते ि, उन्ें सम्बन्दित तत्त्वों ंपर उहचत प्रकार से ध्यान करने के िारा दूर हकया िा सकता ि।

पृथ्वी तत्त्व पर ध्यान : पृथ्वी तत्त्व का ध्यान पीले रंग के चतुभुथि पर, िो मीठी सुगि दे रिा िो, हकया िाता ि। इस प्रकार ध्यान करते हुए बीाक्षर 'लं' का उच्चारण कीहिए। आपका ध्यान मूलाार चक्र पर केन्दन्द्रत िोना चाहिए।

इस प्रकार हनरन्तर ध्यान करने पर िरीर स्वहणथम आभा युि तथा दैवी ति सम्पन्न िो िाता ि तथा वि बहलष्ठ दि का स्वामी िो िाता ि। आपको मानहसक नेत्रों ंिारा उपरोि बताये अनुसार बार-बार पृथ्वी तत्त्व को देखना चाहिए।

अडि तत्त्व पर ध्यान : महणपूर चक्र में लाल रंग के हत्रकोण का ध्यान करें और बीाक्षर 'रं' का िप करें। इस प्रकार ध्यान करने वाले सािक को हकसी भी प्रकार की अहि से कोई भय निीं ंरिता। उस पर अहि का कोई प्रभाव निीं ंपिता। उसकी पाचन िन्दि अद्भुत िोती ि।

वायु तत्त्व पर ध्यान : अनाित चक्र पर िरे रंग के गोलाकार चक्र का ध्यान करें। बीिाक्षर 'यं' का िप करें। इस प्रकार वायु तत्त्व का ध्यान करने वाले साधक को हसन्दि हमलने पर वायु में किीं ंभी भ्रमण करने की िन्दि आ िाती िै।

आकाि तत्त्व पर ध्यान : इसके हलए हिुशि चक्र में काले रंग के हनराकार पदाथथ का ध्यान करें अथवा काले हबन्दु का ध्यान करें। बीिाक्षर 'ि' का िप करें।

आकाि तत्त्व पर ध्यान में हसन्दि से साधक हत्रकालज्ञ िो िाता िै तथा उसे सभी हसन्दियों ंका ज्ञान िो िाता िै।

जल तत्त्व : ब्राह्ममुहतथ में स्वाहिष्ठान चक्र में श्वेत अिथ चक्र पर ध्यान करें। इस ध्यान में हसन्दि से साधक भूख और प्यास से मुि िो िाता िै और उस पर िल का कोई प्रभाव निीं ंपड़ता। ध्यान के समय बीिाक्षर 'व' का िप करें।

हवहभन्न तत्त्वों ंपर उहचत प्रकार से ध्यान करने पर इन तत्त्वों ंके कारण िोने वाले हवहभन्न रोग ठीक िो िाते िैं।

ध्यान िेतु सवथश्रेष्ठ काल ब्राह्ममुहतथ िै तथा इस िेतु सवथश्रेष्ठ आसन पद्मासन अथवा हसिासन िै।

हकसी हिशेष समय पर कौन-सा तत्त्व उहदत िो रिा िै, यि िानने की बहुत-सी हवहधयाँ िैं। क्योंहक तत्त्व िमारी गहतहवहधयों ंपर िासन करते िैं, इसहलए इन हवहधयों ंका ज्ञान िोना आवश्यक िै। िमारी प्रत्येक श्वास हकसी-न-हकसी तत्त्व से संयुि िै। िब िम हिशेष समय पर उहदत िोने वाले तत्त्व के बारे में िानने योग्य िो िाते िैं, तो िम उन कायों को करके लाभ प्राप्त कर सकते िैं, हिनमें वि तत्त्व सियोगी िोता िै। नीचे कुछ हवहधयाँ दी िा रिी िैं, हिनके िारा हकसी समय में कायथ करने वाले तत्त्व को िाना िा सकता िै।

रंगों ंिारा तत्त्वों ंकी पिचान

सवथप्रथम पद्मासन अथवा हसिासन में िणमुखी मुिा सहित बैठ िायें। (कानों ंको दोनों ंिाथों ंके अंगूठों ंसे बन्द करें। आँखों ंको दोनों ंतिथहनयों ंसे, नासा-रन्ध्रों ंको मध्यमा उँगहलयों ंसे तथा मुख को अनाहमका और कहनष्ठा उँगहलयों ंसे बन्द करें। यि िणमुखी मुिा िै।) अहतररि हववरण िेतु मेरी पुस्तक 'िठ योग' अथवा 'कुण्डहलनी योग' का अध्ययन करें।

अब नाहसकाग्र अथवा भ्रूमध्य में धारणा करें। विाँ कुछ रंग हदखायी देंगे। अलग-अलग तत्त्वों ंके सूचक रंग हनम्नांहकत िैं :

पृथ्वी-पीला, िल-श्वेत, अहि-लाल, वायु-गिरा नीला अथवा नीला िरा या िरा, आकाि-काला या काले धब्बे ।

आकार से तत्त्वों ंकी पिचान

एक साफ दपथण िाथ में ले कर उसे नासा-रन्ध्रों ंसे ६ इंच की दूरी पर रखें। अब दपथण पर श्वास छोड़ें, श्वास की गरमी से भाप िम िायेगी। यि एक हनहश्चत आकार में िोती िै। यि आकार हकसी हिशेष तत्त्व को सूहचत

करता िै िो हनम्नानुसार िै : पृथ्वी-वगाथकार अथवा आयताकार, िल-अिथ चक्र, अहि-हत्रकोण, वायु-गोलाकार अथवा िट्कोण, आकिा-छोटे-छोटे हबन्दु ।

श्वास-प्रविा की हदिा िारा तत्त्वों ंकी पिचान

बि पृथ्वी तत्त्व प्रमुख िोता िै, तो श्वास का प्रविा एक सिीी रेखा में िोता िै। िब िल तत्त्व प्रमुख िोता िै, तो श्वास थिोी नीचे की ओर िोती िै। यहद श्वास का प्रविा ऊपर की ओर िो, तो यि अहि तत्त्व का सूचक िै तथा यहद श्वास का प्रविा नूयून कोण पर हबना हकसी क्रम के िो, तो वायु तत्व प्रमुख िै और यहद श्वास का प्रविा नाहसका के हबलकुल पास (िैसे हक नासा-रन्ध्रों ंके भीतर िो रिा िो) फैलते हुए िो रिा िो, तो समहझए हक आकिा तत्त्व प्रमुख िै।

रंग-परीक्षण िारा तत्त्वों ंकी पिचान

ैसा हक पिले बताया गया िै हक पृथ्वी का रंग पीला िै, िल का रंग श्‍वेत िै, अहि का लाल िै, , वायु का नीला अथवा िरा अथवा नीले और िरे रंग का फैलाव तथा आकिा का रंग काला िै। हनम्नांहकत परीक्षण सािक के रंगों ंपर स्वाहमत्व को बतलाते िैं :

सािक हकसी आसन पर बैठ िाये। उसकी पीठ पर पाँचों ंतत्त्वों ंके रंग वाले पत्थर रखें। आँखें बन्द करके उसे उस समय कायथ कर रिे तत्त्व के बारे में हचन्तन करने के हलए किें। अब हबना देखे कोई भी पत्थर उठाने के हलए किें। तत्पश्चात् उससे पूछें हक उठाये गये पत्थर का रंग उसके िारा सोचे गये तत्त्व से मेल खाता िै या निीं।ं यहद प्रत्येक बार सभी तत्त्वों ंके साथ उसका अनुमान सत्य हनकलता िै, तो इसका अथथ िै हक उसने सभी तत्त्वों ंके प्रविा तथा प्रकृहत के बारे में उनके रंगों ंके िारा पढ़ा और समझा िै।

तत्त्वों ंका स्वाद

पृथ्वी मीठा िै, िल कसैला, अहि खट्टा और वायु तथा आकिा क्रिवा िै। िब तत्त्वों ंपर िारणा तथा ध्यान हकया िाता िै, तब ये स्वाद िीभ की नोंकं पर अनुभव िोते िैं। िब तत्त्व पर ध्यान हकया िाये, तब उपरिी स्वाद को संयुि हकया िाना चाहिए।

श्वास-प्रविा की लम्बाई

बि व्यन्दि श्वास बािर छिोता िै, तो यि वातावरण में हवलीन िोने के पूवथ कुछ दूरी तक सिीी िाती िै। थिेली को सामने रख कर या ऊपर-नीचे हिला कर इसका सरलतापूवथक अनुभव हकया िा सकता िै। यहद श्वास की लम्बाई १२ इंच िो, तो यि पृथ्वी तत्त्व को इंहगत करती िै। िब श्वास की लम्बाई ४ इंच िोती िै, तो अहि तत्त्व प्रिान िै। श्वास की लम्बाई १६ इंच िोने पर िल तत्त्व िोता िै तथा श्वास की लम्बाई ८ इंच िोने पर वायु तत्त्व िोता िै।

बि आकाि तत्त्व का उदय िोता िै, तब नासा-रन्ध्ों ंके बिार श्वास के प्रवाि का अनुभव िी निीं ंिोता। यि नासा-रन्ध्ों ंके भीतर िी चक्र बनाती िै तथा नाहसका से बिार हनकलते िी वायु में हवलीन िो िाती िै।

ऊपर बतायी गयी हवहियों ंसे िम हकसी समय में उहदत िोने वाले हििेि तत्त्व को िान सकते िैं। इस ज्ञान का िम हकस प्रकार लाभ उठा सकते िैं, वि हवहि इसी पुस्तक में अन्यत्र वहणथत िै।

तत्त्व तथा नक्षत्रों ंएवं ग्रिों ंआहद का सम्बि

पााँचों ंतत्त्व हवहभन्न ग्रिों ंऔर नक्षत्रों ंको व्यि करते िैं, ये हनम्न िैं :

पृथ्वी सूयथ एवं गुरु को सूहचत करता िै; िल चन्द्रमा और िहन को व्यि करता िै; अहि मंगल का सूचक िै तथा बुि आकाि िारा व्यि हकया िाता िै। चन्द्र नििी में अहि तत्त्व का िोना िुक्र का सूचक िै।

अन्य दृहिकोण के अनुसार ऐसा कि िाता िै हक सूयथ तथा मंगल अहि से सम्बि िैं; चन्द्रमा तथा िुक्र िल से सम्बि िैं; बुि आकाि से और गुरु तथा िहन पृथ्वी से सम्बि िैं। राहु और केतु वायु से सम्बि िैं।

सत्ताईस नक्षत्र हनम्नानुसार हनयन्दित िोते िैं :

पृथ्वी तत्त्व- रोहिणी, अनुिा, ज्येष्ठा, उत्तरािाढ़ा, श्रवण, िहनष्ठा तथा अहभहित (अट्ठाईसवााँ नक्षत्र)।

जल तत्त्व- आिा, मूल, पूवाथिाढ़ा, ितहभिा, उत्तरा भािपद, रेवती एवं आश्लेिा।

अहि तत्त्व- भरणी, कृहतका, पुष्य, मघा, पूवाथफाल्गुनी, स्वाहत तथा पूवाथ भािपद ।

वायु तत्त्व- अहश्वनी, मृगहििथ, पुनवथसु, उत्तरा फाल्गुनी, िस्त, हचत्रा तथा हविाखा ।

बारि राहियों ंमें से मेि, हसंि तथा िनु राहि अहि तत्त्व से सम्बि िैं; कन्या तथा मकर राहि पृथ्वी से सम्बि िैं; हमथुन, तुला और कुम्भ वायु तत्त्व से तथा ककथ, वृहश्चक और मीन िल से सम्बि िैं।

आकाि सभी नक्षत्रों ंऔर राहियों ंमें व्याप्त िै।

तत्त्व और मानव-िरीर

पृथ्वी : िहियों, ंमांसपेहियों, ंत्वचा, केि तथा नाहड़यों ंको हनयन्दित करता िै।

जल : वीयथ, न्दस्त्रयों ंमें वसा, मूत्र तथा लार को हनयन्दित करता िै।

अहि : भूख और प्यास, हनिा और आलस्य तथा तन्द्रा और प्रकाि पर हनयंिण करता िै।

वायु : गहत, चलना, सूाँघना, हसकुड़ना तथा फैलना आहद हक्रयाओं ंपर हनयंिण करता िै।

आकाि : प्रेम तथा घृणा, लज्जा और भय तथा सांसाररक हवचारों ंमें कमी पर हनयंिण करता िै।

तत्त्वों ◌के लाभ

पृथ्वी तत्त्व उहदत ◌िो, उस समय यहद कायाथरम्भ हकया ◌िाये, तो वि सदा सफल ◌िोगा। अथथायी कायथ ◌िैसे खाना-पीना आहद (अथाथत् ◌िो थथायी प्रभाव र्निीं ◌प्रदान करते या हिनका प्रभाव एक हनहश्चत अवहि के हलए ◌िो) ◌िब लि तत्त्व कायथ कर रि ◌िो, हकये ◌िा सकते ◌िैं।

बि अहि, वायु तथा आकाि तत्त्व कायथरत ◌िों,◌ तो उस समय यहद कायथ का आरम्भ हकया ◌िाये, तो पररणाम अचे्छे र्निीं ◌प्राप्त ◌िोते । अतुः इस समय ईश्वर का ध्यान करना अहिक अच्छा ◌िोगा। ये तत्त्व आध्याम्न्दिक लाभ ◌िेतु उत्तम ◌िैं।

अहि तत्त्व से हनषठुर अथवा कठोर कायों में वृम्न्दि ◌िोती ◌िै। अत: इस समय व्यम्न्दि को कोई भी कायथ ◌िाथ में लेने से पूवथ ब्रिी साविानी रखनी चाहिए।

आकाि तत्त्व से व्यम्न्दि को योग में सफलता हमलती ◌िै। आकाि तत्त्व के समय प्राणों ◌पर र्िि ◌िी हनयिण करके कुम्भक हकया ◌िा सकता ◌िै, इसका मन भी इस समय सरलता से हनयम्न्दित एवं एकाग्र ◌िो ◌िाता र्िै। आकाि तत्त्व सभी सांसाररक कायों ◌िेतु अनुपयोगी ◌िै; क्ोंहक इस समय मन बहिमुथखी न ◌िो कर ◌िान्त रिता र्िै।

सांसाररक कायों के हलए पृथ्वी तथा ◌िल तत्त्व ◌िुभ, अहि मध्यम, तथा आकाि अिुभ फलदायक ◌िै।

भहवष्य में ◌िोने वाली र्टनाओं ◌के पूवाथनुमान तथा हकसी अप्रत्यक्ष हवचार से सम्बम्न्दित प्रश्नों ◌के उत्तर देने र्िेतु हनम्नांहकत हववरण सिायक हसि ◌िोंगे :

पृथ्वी तत्त्व पहश्चम पर, ◌िल तत्त्व पूवथ पर, वायु तत्त्व उत्तर पर तथा अहि तत्त्व दहक्षण पर ◌िासन करता ◌िै। आकाि तत्त्व मध्य हबन्दुओं ◌पर ◌िासन करता ◌िै।

चन्द्र नािी में पृथ्वी तथा ◌िल का उदय अत्यन्त ◌िुभ ◌िै; क्ोंहक इससे सभी कायों में सफलता हमलती ◌िै, बि हक सूयथ नािी के साथ अहि तत्त्व मंगलकारी ◌िै।

पृथ्वी तथा ◌िल क्रमिुः हदन और राहत्र में आय के सूचक ◌िैं। अहन मृतुयु का सूचक ◌िै। वायु सामान्य कमी की ओर इंहगत करता ◌िै तथा आकाि पूणथ ◌िाहन की ओर संकेत करता ◌िै।

पृथ्वी स्वाहयत्व, ◌िल आय, वायु गहत और अथथाहयत्व तथा अहि और आकाि ◌िाहन और मृतुयु को बतलाते र्िैं।

पृथ्वी र्िि◌ तथा भयंकर ◌िीव हिनके बहुत से पैर ◌िों,◌ से सम्बम्न्दित हवचारों ◌को व्यि करता ◌िै। ◌िल तथा वायु र्िहवत प्राहणयों ◌तथा चौपायों ◌से सम्बम्न्दित हवचारों ◌में वृम्न्दि करता ◌िै। आकाि के समय सामान्यतया कोई हवचार र्निीं ◌◌िोता अथवा इस समय स्वगथ के देवों ◌से सम्बम्न्दित हवचार मन में उत्पन्न ◌िोते ◌िैं।

इस अध्याय में वहणथत हविय पूणथ ज्ञानी योहगयों ◌के हलए ◌िैं। योग में दृढ़तापूवथक न्दथथत हुए हबना हकसी भी उदे्देश्य ◌िैसे रोगों ◌के उपचार अथवा भहवष्य में ◌िोने वाली र्टनाओं ◌सम्बिी हनदेि आहद के हलए तत्त्वों ◌का प्रयोग र्निीं ◌हकया ◌िा सकता।

अध्याय ७
सामान्य अनुमान

वि योगी िो तत्त्वों ंएवं उनके कायों का पूणथ ज्ञान रखता िो तथा स्वर योग में भी प्रवीण िो, उसका प्रथम कतथव्य िै हक वि दिे की समृन्दि िेतु सामान्य लक्षणों ंसे सम्बन्दित हदिा-हनदिे समय-समय पर लोगों ंको प्रदान करता रिे। इस कायथ िेतु हनम्न कुछ तथ्य अत्यन्त सिायक हसि िोंगे।

वाहिथक पूवाथनुमान

योगी मिे संक्रान्दन्त के समय पद्मासन में बैठे तथा तत्त्व और नािी की प्रकृहत का हवश्लेिण करे :

पृथ्वी, िल तथा वायु तत्त्व चन्द्र नािी में िो, तो यि सभी अनािों ंकी प्रचुरता का सूचक िै।

अहि और आकाि सामान्यतया दुहभथक्ष के सूचक िैं।

सुिुम्ना का प्रवाि भ्रम, भय तथा बीमारी का द्योतक िै।

सप्तिा के हदन, चन्द्र हदवस तथा मिे संक्रान्दन्त के समय के अनुसार यहद सिी तत्त्व का उदय िो तथा सिी नािी चल रिी िो, तो प्रत्येक क्षेत्र में सफलता प्रिि िी की िा सकती िै।

इसी प्रकार साप्ताहिक, पाहक्षक, माहसक तथा दैहनक पूवाथनुमान बताये िा सकते िैं।

भूहम िेतु सामान्य पूवाथनुमान के समय श्वास का प्रवाि चन्द्र नािी में (बायाँ स्वर) िोना चाहिए।

यहद प्रश्न के समय अहि तत्त्व का उदय िो, तो बािार में बहुत अहिक उतार-चढ़ाव िोंगे। यहद आकाि तत्त्व उहदत िो, तो बािार में वस्तुओं ंकी कमी िोगी। ऐसे समय में यि ठीक िोगा हक बािार की गहतहवहियों ंको रोक कर एक माि अथवा पन्दरि हदनों ंपश्चात् प्रारम्भ करें।

प्रश्न के समय यहद श्वास अपना प्रवाि चन्द्र से सूयथ की ओर पररवहतथत करे, तो दिे में भयानक रोग िोंगे।

िब चन्द्र नािी चल रिी िो, तो पृथ्वी में प्रचुर मात्रा में खाद्यान्न पैदा िोगा और समय पर अच्छी वािथ िोगी।

स्वयं के हलए हदिा-हनदिे

१. भोजन : चन्द्र नि़ी में अच्छी तरि भिोन करें। सूयथ नि़ी में पररहमत भिोन करें तथा सिुम्ना में बहुत थोि़ा भिोन लें।

यहद सिुम्ना चल री िो, तो उपवास रखना श्रेष्ठ िोगा। इस समय हलये गये भिोन का पाचन निीं ंिोता तथा यि रोग उत्पन्न करता िै।

बि पृथ्वी तत्त्व उहदत िो मीठा खायें, िल तत्त्व में तरल पदाथथ, अहि के समय तले हुए पदाथथ, वायु में कन्द-मूल तथा अनिा और आकिा के समय नमकीन पदाथथ ग्रिण करें।

आिार के समय हनम्न क्रम अपनाना चाहिए :

पृथ्वी चन्द्र नि़ी में-चावल और दिू।

पृथ्वी सूयथ नि़ी में-वसा।

अहि चन्द्र अथवा सूयथ नि़ी में-आटा और दालें।

िल चन्द्र नि़ी में-र्ी।

िल सूयथ नि़ी में-तेल में पके पदाथथ।

पृथ्वी तथा िल चन्द्र नि़ी में-खीर।

पृथ्वी तथा िल सूयथ नि़ी में छाछ अथवा मट्ठा।

बि पृथ्वी, िल तथा अहि चन्द्र नि़ी में िों, ं तो सामान्यतया फल और दिू लें।

बि वायु तथा आकिा चन्द्र नि़ी में कायथ करें, पकी हुई पत्तेदार सन्दियााँ लें।

भिोन में क्रम इस प्रकार रिेगा-र्ी, हफर मीठा, हफर खट्टी वसुतुएाँ तथा अन्त में तीखी वसुतुएाँ। आपको र्ी से बनी हुई वसुतुओं ंसे भिोन प्रारम्भ करना चाहिए तथा अन्त में तीखी वसुतुएाँ ग्रिण करनी चाहिए।

स्वर योग के सिाक के हलए हविेि रूप से तथा सामान्य सभी के हलए चरु अथवा खीर सवथश्रेष्ठ आिार िैं।

अत्यहिक गरम तथा अम्लीय पदाथों से पिरेि रखें।

गरम पदाथों के साथ खट्टा अथवा ठण्ढा दिू लेने से हमतली आती िै।

चन्द्र नि़ी के समय ठण्ढे और तरल पदाथथ लेने से गहठया िोता िै; क्योंहक यि यूररक अम्ल में वृन्दि करते िैं।

चन्द्र निाी में भिोन अत्यन्त िीरे–िीरे करना चाहिए, हिससे पाचन अच्छी तरि िो।

यहद भिोन ग्रिण करते समय और तत्काल बाद चन्द्र निाी को चलाया िाये, तो सभी हवि नि िो िाते िैं।

२. स्नान : िब सूयथ निाी कायथ कर रिी िो, तो तालाब अथवा नदी में प्रवेि करें। इससे हमतली रोग ठीक िो िाता िै। िल से बािर तब हनकलें, िब श्वास हपंगला से इिा में पररवहतथत (बायााँ स्वर चलने लगे) िो िाये । यहद आप चन्द्र निाी (बायााँ स्वर) के प्रवाि के समय िल में रिेंगे, तो यूररक अम्ल में वृन्दि िो िायेगी।

तैल-स्नान के डलए : िब चन्द्र निाी (बायााँ स्वर) चले, तब तेल लगायें और सूयथ निाी (दायााँ स्वर) चले, तब स्नान करें। इससे कफ निीं ंबनेगा।
स्नान के समय अत्यहिक गरम िल िोने से हपत्त की वृन्दि िोती िै। अत्यहिक िीतल िल िोने से गहठया रोग िो िाता िै। स्नान के समय हविेि रूप से तैल-स्नान िेतु गुनगुना िल अथवा िल मात्र उतना िी गरम िो िो ददथ दूर करने िेतु पयाथप्त िो।

नाहियों ंका प्रवाि

यहद चन्द्र निाी कई हदनों ंतक अकेले िी प्रवाहित िो, सूयथ निाी चले िी निीं ंअथवा इसके हवपरीत न्दथथहत िो, तो एक पक्ष अथवा एक माि में मृत्यु का पूवाथनुमान हकया िाता िै।

यहद हकसी भी एक निाी (सूयथ अथवा चन्द्र) में तीन हदन तक हनरन्तर प्रवाि िो, तो यि एक विथ में मृत्यु का सूचक िै।

यहद हकसी हविेि निाी में दो हदन हनरन्तर श्वास का प्रवाि िो, तो यि दो विथ में मृत्यु का सूचक िै।

यहद हकसी हविेि निाी में एक हदन हनरन्तर श्वास का प्रवाि िो, तो एक विथ में मृत्यु सम्भाहवत िै।

सूयथ निाी में श्वास के प्रवाि को रोकने से व्यन्दि सौर-समय का अहतक्रमण कर लेता िै।

वि िो स्वर योग में प्रवीण िै तथा हिसका श्वास के प्रवाि तथा पंच तत्त्वों ंके उदय पर पूणथ हनयंत्रण िै, वि हदन के समय चन्द्र निाी चला कर और राहत्र में सूयथ निाी चला कर अमरत्व प्राप्त करता िै।

उपरोि तथ्य इसहलए बताये गये िैं, हिससे हक व्यन्दि दीर्ाथयु प्राप्त करे और योगाभ्यास करे।

अध्याय ८
मित्त्वपूणथ हनदि

ैसिो हक इस पुस्तक के प्रारम्भ में बतलाया गया िै मानवि–रीर में ऊिथ का संविन करने वाली ७२,००० नाह़ियााँ िैं। इनमें से २४ नाह़ियााँ प्रमुख िैं। इन २४ नाह़ियों ंमें से १० नाह़ियााँ मित्त्वपूणथ िैं तथा इनमें से भी ३ नाह़ियााँ सवाथहिक मित्त्वपूणथ िैं। ये िैं— (१) इ़िा या इंगला अथवा चन्द्र नि़ीी; (२) हपंगला अथवा सूयथ नि़ीी; और (३) सुिम्ना ।

इ़िा बायें भाग में िै, हपंगला दायें भाग में और सुिम्ना मेरुदण्ड के मध्य में िै। प्राण इन नाह़ियों ंके िारा रीर के हवहभन्न भागों ंमें पहुाँचता िै। इ़िा बायें नासा-रन्ध् से प्रवाहित िोती िै, हपंगला दायें नासा-रन्ध् से प्रवाहित ोिती िै और सुिम्ना दोनों ंनासा-रन्ध्ों ंसे प्रवाहित िोती िै। इ़िा चन्द्र नि़ीी िै तथा हपंगला सूयथ नि़ीी िै। िीव हनरन्तर 'सोऽिं' का िप करता रिता िै। श्वास को ध्यानपूवथक देन्दखए । आप पायेंगे हक श्वास भीतर लेते समय 'सो' की ध्वहन िोती िै तथा श्वास छो़िते समय 'िं' की ध्वहन िोती िै। इ़िा और हपंगला की गहत को अत्यन्त साविानीपूवथक देन्दखए। प्राण और मन को िान्त रन्दखए। िो इ़िा और हपंगला को उहचत क्रम में रखते िैं, उन्ें भूत और भहवष्य का ज्ञान िो िाता िै।

इ़िा में श्वास अमृत की भााँहत िोती िै। यि िगत् का पोिण करने वाली िै। दायें में सदा िगत् िन्म लेता ै। सुिम्ना मध्य में चलती िै। इ़िा के प्रवाि के समय िान्दन्त के कायथ करें। हपंगला के प्रवाि के समय कठोर कायथ करें। सुिम्ना के प्रवाि के समय वे कायथ करें, हिनसे आध्यान्दिक िन्दि प्राप्त िो तथा योगासन और हिनसे मोक्ष की प्रान्दप्त िो।

इिा और हपंगला थथूल संवेदनिाक िंिािरें न िो कर वे सूक्ष्म नाहियााँ िैिो सूक्ष्म प्राण ले कर िोती िैं। भौहतक िरीर में वे दायीं ंऔर बायीं ंसंवेदनिाक िंिािरें िैं।

इिा दाहिने वृिण से आरम्भ िोती िै और हपंगला बायें वृिण से। ये दोनों ंमूलािार चक्र में सुिम्ना नािी के साथ हमलती िैं और विााँ एक ग्रन्दन्थ का हनमाथण करती िैं। मूलािार चक्र में इन तीनों ंनाहियों ंके हमलने के थथान को मुिा हत्रवेणी किते िैं। गंगा, यमुना तथा सरस्वती क्रमिः हपंगला, इिा और सुिम्ना के रूप में यिााँ हमलती िैं। इस हमलन-थथल को ब्रह्म ग्रन्दन्थ किते िैं। ये अनाित और आज्ञा चक्र में पुनः हमलती िैं।

इिा िीतल िै और हपंगला उष्। हपंगला भोिन का पाचन करती िै। इिा पीले रंग की, िन्दि रूपा िै। यि संसार का पोिण करती िै। हपंगला गिरे लाल रंग की, रुि रूपा िै। इिा और हपंगला काल की द्योतक िैं, िब हक सुिम्ना काल का भक्षण करती िै। योगी को अपने मृत्यु-काल का पूवथ में िी ज्ञान िो िाता िै; इसहलए वि उस समय अपने प्राणों ंको सुिम्ना में ले िाता िै और उन्हें ब्रह्मरन्ध्र में रोके रिता िै तथा काल का सामना करता िै। मिाराष्ट्र के प्रहसि योगी श्री चांगदेव ने अपने प्राणों ंको सुिम्ना में ले िा कर मृत्यु के हवरुि कई बार युि हकया। वे पूना के पास आलन्दी के श्री ज्ञानदेव के समकालीन थे। श्री चांगदेव ने योगाभ्यास िारा भूत-हसन्दि तथा िंगली िानवरों ंपर हनयंत्रण प्राप्त हकया था।

इिा और हपंगला में से प्रत्येक की समयावहि पााँच ईटका अथवा दो र्ण्टे की िै। वे हदन की ६० ईटकाओं ंमें क्रमवार चलती िैं। प्रत्येक ईटका में पंच तत्त्व भी प्रवाहित िोते िैं। िुक्ल पक्ष की प्रहतपदा से हदन प्रारम्भ िोते िैं। िब क्रम हवपरीत िोता िै, तो प्रभाव भी हवपरीत िोता िै। िुक्ल पक्ष में इिा िन्दिशाली िोती िै। कृष् पक्ष में हपंगला िन्दिशाली िोती िै। यहद सूयोदय के समय इिा प्रवाहित िो और सारे हदन चले तथा सूयाथस्त के समय हपंगला चलना प्रारम्भ िो और सारी रात हपंगला िी चले, तो यि बहुत अच्छे पररणाम देती िै।

श्वास को सूयोदय से ले कर सूयाथस्त तक सम्पूणथ हदवस इिा से, बायें नासा-रन्ध्र से प्रवाहित िोने दीहिए तथा सूयाथस्त से सूयोदय तक सारी रात हपंगला, दाहिने नासा-रन्ध्र से श्वास को प्रवाहित िोने दें। यिी स्वर-सािना का अभ्यास िै। वि िो इसका अभ्यास करता िै, वि मिान् योगी िै। इसका अभ्यास कीहिए। अब िाहगए, अमरता के अमृत का पान कीहिए। अपने भीतर तमोगुण के सभी रूपों—िंिता, आलस्य तथा अज्ञान को त्याग दें। अपनी बेकार की गपिप, व्यथथ बातों ंतथा अन्यों ंकी आलोचना करने की आदत को त्याग दें। कुछ तो व्याविाररक कायथ करें।

गलत स्वर का चलना रोगों ंका कारण िै। ऊपर बताये अनुसार स्वर को सिी रखने से स्वास्थ्य और दीर्ाथयु की प्रान्दप्त िोती िै। इससे आपको हनस्सन्देि अद्भुत लाभ प्राप्त िोगा।

एक हदन और रात में श्वास २१,००० बार भीतर आती और बािर िाती िै। िब श्वास दाहिने नासा- रन्ध्र से भीतर आती िै और बािर िाती िै, तो सूयथ अथवा हपंगला नािी (दाहिना स्वर) काम करती िै। िब श्वास बायें नासा-रन्ध्र से भीतर आती और बािर िाती िै, तो इिा अथवा चन्द्र नािी (बायााँ स्वर) काम करती िै।

पृथ्वी तत्त्व का रंग पीला, िल तत्त्व का रंग श्वेत, अहि तत्त्व का रंग लाल, वायु तत्त्व का रंग िरा तथा आकाि तत्त्व का रंग काला िै।

प्रात: िागते िी दायीं ंिथेली देखना िुभ िै। इस समय िो नािी चल रिी िो, उसके अनुरूप िथेली से मुख (चेिरे) को स्पिथ करना बहुत अहिक लाभदायक िै। अथाथत् यहद सूयथ नािी (दायााँ स्वर) चल रिी िो, तो दाहिनी िथेली से मुख को स्पिथ करें।

यहद प्रातुःकाल हपंगला (दायाँ स्वर) चल री ो, तो हबस्तर से नीचे उतरते समय दाहिना पैर भूहम पर सवथप्रथम रखें और पूवथ अथवा उत्तर हदिा की ओर तीन पग चलें तथा यहद इा (बायाँ स्वर) नाी चल री ो, तो बायाँ पैर सवथप्रथम भूहम पर रखें और पहश्चम तथा दहक्षण हदिा की ओर तीन पग चलें। प्रातुः ागते ी यहद बायाँ स्वर चलता ै, तो यि अत्यन्त ुभ ै। चन्द्र नाी के अनुरूप भूहम पर पैर रखना बहुत लाभदायक ै।

यहद हपंगला अथवा सूयथ नाी चल री ै और यहद कोई प्रश्न पूछे, तो यहद वि नीचे, पीछे अथवा दायीं ं ओर ख़ै रि कर प्रश्न कर रिा ै, तो वि अवश्य ी सफल ोगा। यहद चन्द्र नाी चल री ै और प्रश्नकताथ ऊपर सामने अथवा बाथी ओर ख़िा ै, तो उसे सफलता हमलेगी।

सूयथ नाी के तीन हदन ैं-रहववार, मंगलवार तथा िहनवार । चन्द्र नाी के चार हदन ैं—सोमवार, बुिवार, गुरुवार तथा ुक्रवार। नाी के अनुरूप हदनों ंमें यहद प्रश्न पूछे ाते ैं, तो वे पररणामदायक ोते ैं। यहद सुिुम्ना के समय प्रश्न हकया ाता ै, तो वि हनष्फल ोता ै।

श्वास छोे़ते समय वायु की लम्बाई सामान्यतया १२ अंगुल ोती ै। भोन के समय यि २० अंगुल, चलते समय २४ अंगुल, ियन के समय ३० अंगुल, मैथुन के समय ३६ अंगुल और व्यायाम के समय श्वास की लम्बाई और भी अहिक ोती ै।

एक स्वथथ मनुष्य में प्रहत ढाई ईटका अथवा १ र्ण्टे पश्चात् नाह़ियों ंमें पररवतथन ोता ै। ब सुिुम्ना चले, तो ईश्वर का ध्यान करें।

प्रत्येक मिा ुक्ल पक्ष के प्रथम तीन हदन; सातवें, आठवें और नौवें हदन; तेरिवें, चौदिवें तथा पूहणथमा को चन्द्र नाी चलना लाभदायक ै तथा ुक्ल पक्ष के चौथे, पाँचवें, छठे, दसवें, ग्यारिवें और बारिवें हदन सूयथ नाी का चलना लाभदायक ै।

प्रत्येक मिा के कृष् पक्ष में प्रथम तीन हदन, सातवें, आठवें, नौवें हदन तथा तेरिवें, चौदिवें और अमावस के हदन सूयथ नाी लाभकारी ै तथा िे हदनों ंमें इा अथवा चन्द्र नाी लाभकारी ै।

ब इा नाी चले, तो पुण्य-कायथ कीहिए। भोन तथा ारण सूयथ नाी के अनुरूप ोना चाहिए। इा नाी सभी अंगों ंमें अमृत की विाथ करती ै।

ब चन्द्र नाी चल री ो, तो लम्बी तीथथयात्रा प्रारम्भ करें, ाहमथक कमथकाण्ड करें, कुएँ-तालाब खुदवायें, मन्न्दरों ंका उद्र्ाटन करें, मूहतथयों ंकी प्राण-प्रहतष्ठा करें, औिहियाँ लें, हववाि करें, नवीन गृि में प्रवेि करें, कृहि-कायथ आरम्भ करें, माहलक अथवा हमत्र से हमलें, गुरु की पूा करें तथा अध्ययन करें।

ब सूयथ नाी चल री ो, तो व्यायाम करें। ब आप हकसी र्र अथवा िर में प्रवेि करें अथवा प्रथथान करें, तो नाी के अनुरूप पैर रखें।

िणमुखी अथवा योहन मुिा का अभ्यास करें-दोनों ंकानों ंको अ ाँगूठों ंसे बन्द करें, दोनों ंतिथहनयों ंसे आँखों ं के कोने बन्द करें, मध्यमा उँगहलयों ंसे नाहसका-रन्ध्ों ंको बन्द करें तथा अनाहमका और कहनष्ठा उंगहलयों ंसे मुख को बन्द करें। ालका कुम्भक करें और भ्रूमध्य में अपना ध्यान केन्न्द्रत करें।

इस समय यहद पीले रंग का गोला हदखायी दे, तो पृथ्वी तत्त्व ि ै; यहद लाल रंग हदखायी दे, तो अहि तत्त्व ि ै; यहद काले रंग का गोला हदखायी दे, तो आकाि तत्त्व ि ै; यहद ि रा या नीला रंग हदखायी दे, तो वायु तत्त्व ि ै तथा यहद श्ेवेत रंग हदखायी दे, तो ि ल तत्त्व ि ै।

सूयथ नाड़ी के अंक हविम अथवा ३, ५, ७, ९ ि ैं तथा चन्द्र नाड़ी के हलए सम अंक २, ४, ६, ८ आहद ि ैं। यहद सूयथ नाड़ी के समय कोई प्रश्न पूछा ि ाये और यहद प्रश्न के अक्षर हविम ि ैं, तो प्रश्न सफल ि ोगा।

ि ब आप स्वरोदय सीखना प्रारम्भ करें, तो उसके पि ले हिवि ी को प्रणाम करें ि ो इस अद्भुत हवज्ञान के दाता ि ैं और 'ॐ नमः हिवाय' मि का ि प करें तथा सभी हवघ्नों ंको दूर करने वाले श्री गणेि ि ी को प्रणाम करें।

अध्याय ९

व्याविाररक पथ-प्रदिथन

अभ्यास ि ेतु उपयुि आसन

श्वास के हनरीक्षण ि ेतु साधक को मृग-चमथ अथवा व्याघ्र-चमथ अथवा कुिासन अथवा श्ेवेत वस्त्र अथवा सुन्दर नरम गलीचे पर बैठना चाहिए। उपयुथि में से हकसी एक आसन पर पद्मासन में बैठें, सभी बुरे हवचारों ंको दूर ि टा दें। उहियान बन्ध लगायें और अपना ध्यान इडा, हपंगला तथा सुषुम्ना नाड़ी पर केन्दन्द्रत करें। एक हदन में

श्वास नासा-रन्ध्ों ंसे २१,६०० बार िाती िै। यि हनम्न चक्रों ंसे िो कर िाती िै-मूलािार,स्वाहिष्ठान, महणपूर, अनित, हिविु और आज्ञा चक्र ।

तीन मित्त्वपूणथ नाह़ियााँ

बायें नासा-रन्ध् से िाने वाली श्वास को इिा नाि़ी किते िैं तथा दायें नासा-रन्ध् से िाने वाली श्वास हपंगला नाि़ी किलाती िै। इन्ें क्रमिः चन्द्र और सूयथ नाि़ी भी किते िैं। िब श्वास दोनों ंनासा-रन्ध्ों ंमें निीं ंरिती िै, वि सुिुम्ना नाि़ी में रिती िै। इसे अहि नाि़ी भी किते िैं। िब श्वास दोनों ंनासा-रन्ध्ों ंमें एक-समान प्रवाहित िोती िै, तो उसे पूणथ किते िैं।

चन्द्र नाि़ी को स्त्रीहलंग माना िाता िै तथा यि काले रंग और राहि-चक्र के न्दथथर हचह्नों ंसे संयुि िै। सूयथ नाि़ी को पुन्दलंलंग माना िाता िै। यि श्वेत रंग तथा राहि-चक्र के चहलत हचह्नों ंसे संयुि िै। अहि नाि़ी (सुिुम्ना) को नपुंसक माना िाता िै। यि राहि चक्र के सामान्य हचह्नों ंसे संयुि िै।

यहद हकसी को यात्रा पर िाना िो, तो उसे यात्रा प्रारम्भ उस समय करनी चाहिए, िब इिा नाि़ी (बायााँ स्वर) चल रिी िो तथा गन्तव्य थथान पर पहुाँचते समय सूयथ नाि़ी (दायााँ स्वर) चलनी चाहिए।

चन्द्र नाि़ी (बायें स्वर) में हनम्न कायथ िुभ िैं:

सनेेदवैवाहिक भिैना, स्वयं प्रहतहनहि अथवा रािदूत बनना, नवीन वस्त्र तथा आभूिण िारण करना, हववाि-संस्कार करना, दास अथवा आहश्रतों ंको रखना, कुआाँ अथवा तालाब खोदना, हनवास-थथान िेतु भूहम क्रय करना, नवीन गृि में प्रवेि करना, वसुतुओं ंका हवक्रय करना, रािा से प्रथम बार भेंट करना, पहवत्र कमथकाण्ड करना, इष्टदेव अथवा मूहतथ की प्राण-प्रहतष्ठा करना, ज्वर का उपचार करना, पुराने ितुरु से सन्दि करना, लाभ के हनहमत्त िन अिथन करना, उपिार तैयार करना, बुरी आदतों ंको त्यागना।

सूयथ नाि़ी अथवा दायें स्वर में हनम्न कायथ करना िुभ िै :

गुरु से उपदेि ग्रिण करना, अन्य को हिक्षा देना, िास्त्रों ंका अध्ययन करना, िास्त्रों ंकी हिक्षा देना, अन्य का आहतथ्य करना, ितुरु की सेना को खदे़िना, बीि बोना, व्यापार करना, चोरी करना, द्यूतक्री़िा करना, िास्त्राथथ करना, िाथी-घो़िे अथवा रथ की सवारी करना, लेख हलखना, संगीत का कायथक्रम देना, भािण देना, घृणा उत्पन्न करना, हकसी का अंग-भंग करना, न्याहयिीिों ंको आमन्दित करना, असुरों ंको खदे़िना, मि-हसन्दि प्राप्त करना, हचहकत्सा प्रारम्भ करना, राहत्र-भोिन करना, ियन करना, स्नान करना तथा यौहगक हिन्दि द्वारा ितुरु की गहतहवहियााँ रोकना।

िब सुिुम्ना चले, तो समाहि िेतु सािना करना श्रेष्ठ िै। इस समय कोई भी इच्छा पूणथ निीं ंिो सकती। यहद इस समय कोई अपनी गुमी हुई वसुतु के बारे में प्रश्न करे, तो उत्तर नकारात्मक िोगा। इस समय कोई कल्याणप्रद कायथ निीं ंिोंगे; बन्दल्क इसके हवपरीत बुरे कायथ सफल िोंगे।

हिस नासा-रन्ध् से श्वास चलती िै, उसे पूणथ किते िैं। िब कोई ताहकथक योगी के पूणथ ओर ख़िा रिता िै, तो योगी यि पूवाथनुमान कर लेता िै हक वि हवियी िोगा। हकनुतु वैसा व्यन्दि यहद योगी के िून्य ओर ख़िा िो, तो वि पराजय को प्राप्त िोगा।

चन्द्र निाी का प्रभाव पहश्चमी और दहक्षणी प्रदिें ंपर िोता िै तथा सूयथ निाी का प्रभाव पूवी ओर उत्तरी प्रदिें ंपर ीिा िै। िब व्यन्दि की श्वास बायें नासा-रन्ध् से प्रवाहित िो रिी िो, तो उसे पहश्चम और दहक्षण की ओर यात्रा करना श्रेष्ठ िोगा तथा यहद उसकी श्वास दाहिने नासा-रन्ध् से प्रवाहित िो रिी िो, तो उसे पूवथ अथवा उत्तर में ीिा श्रेष्ठ िोगा।

अच्छे तथा बुरे की भहवष्यवाणी िेतु हनयम

यहद प्रश्नकताथ योगी के पूणथ ओर ख़िा िै, तो वि िो चीोगा, वि उसे प्राप्त िोगा। इसके साथ िी प्रश्नकताथ के प्रश्न के प्रथम िब्दों ंके अक्षरों ंकी हगनती भी करें। यहद इनकी संख्या हविम िै, तो वि सूयथ निाी के प्रभाव को प्राप्त करेगा तथा यहद इनकी संख्या सम िै, तो वि चन्द्र निाी के प्रभाव को प्राप्त करेगा। यहद प्रश्नकताथ पूणथ की ओर ख़िा ीकर अपनी िाहन अथवा हवि-दंि के बारे में अथवा मृतुयु से सम्बन्दित प्रश्न कर रिा िै, तो ये सभी दिो हनष्प्रभावी िो ीयेंगे। िो-कुछ उसका खोया िै, वि सब हमल िायेगा। लेहकन वि इसके हवपरीत ख़िा िै, तो उसका प्रभाव हवपरीत ीगा। यहद प्रश्नकताथ यि िानने के हलए आया िै हक उसका िोने वाला ीिहु बालक िोगा अथवा बाहलका, तो यहद वि हकसी िीहवत प्राणी पर सवार िो कर अथवा िीहवत प्राणी को पक़िे हुए अथवा स्पिथ हकये िो तथा यहद वि योगी के दाहिनी ओर ख़िा िो और योगी का दाहिना स्वर चल रिा िो, तो उसका उत्तर िोगा बालक। लेहकन यहद वि योगी के बायीं ंओर ख़िा िो और स्वर भी बायााँ िी चल रिा िो, तो िोने वाला ीिहु बाहलका िोगी। लेहकन यहद योगी की सुिम्ना निाी चल रिी िै, तो िोने वाला ीिहु नपुंसक िोगा। यहद प्रश्नकताथ पिले गलत तरफ ख़िा िो, हफर सिी ओर ख़िा िो, तो िोने वाला ीिहु अपनी मााँ के हलए ब़िी कहठनाइयों ंके बाद िन्म लेगा।

श्वास के साथ पंच तत्त्वों ंका संयोग

यहद नासा-रन्ध्रों ंसे बािर आ रिी श्वास नाहसका की ऊपरी ीिी से आ रिी िो, तो यि पृथ्वी तत्त्व के साथ संयुि िै। यहद यि सीिी नीचे िाये, तो यि िल तत्त्व के साथ संयुि िै। यहद यि ऊपर उठती िै, तो यि अहि तत्त्व की द्योतक िै। यहद यि अपने मागथ से िट िाये, तो यि वायु तत्त्व के साथ संयुि िै। यहद यि चारों ंहदिाओं ंमें फैले, तो यि आकाि तत्त्व के साथ संयुि िै।

पृथ्वी से प्रभाहवत श्वास स्वहणथम वणथ की िोती िै। िल से प्रभाहवत श्वास श्वेत वणथ की, अहि तत्त्व की श्वास रि वणथ की तथा वायु तत्त्व से प्रभाहवत श्वास श्याम वणथ की िोती िै। पृथ्वी तत्त्व से युि श्वास मीठा स्वाद देगी, लि तत्त्व से युि श्वास तीखा, अहि तत्त्व से युि श्वास नमकीन तथा वायु तत्त्व से युि श्वास खट्टा स्वाद देगी। पृथ्वी तत्त्व के समय श्वास का आकार अिकोणीय, िल तत्त्व युि श्वास का आकार अिमी के चन्द्रमा की भााँहत, अहि तत्त्व के साथ श्वास का आकार हत्रकोणाकार तथा वायु युि श्वास िटकोणीय आकार की िोती िै। पृथ्वी तत्त्व से श्वास १२ इंच लम्बी िोती िै, िल तत्त्व से १६ इंच की, अहि से ८ इंच की तथा वायु से ४ इंच की लम्बी श्वास हनकलती िै।

बि आकाि तत्त्व प्रिान िोता िै, तो श्वास पारदिथक अथवा रंगीन, गले में क़िवा स्वाद आता िै, श्वास का आकार गोल तथा लम्बाई १ इंच िोती िै।

ऊपर हदये गये हववरण तथा नीचे हदये हववरण में से कुछ उन उच्च योहगयों ंिेतु हनहदथि िैं िो सूक्ष्म रूपों ं तथा संवेदनाओं ंको ग्रिण कर सकते िैं। अन्य इन्ें समझ निीं ंसकते।

यहद कोई यिु ितु समर-प्रांगण में िा रिा िो और वि योगी के चल रिे स्वर की तरफ ख़िे िो कर प्रश्न करे, तो उत्तर यि िोगा हक िब वि वापस आयेगा, तो उसके िरीर पर ग़्राव िोंगें। यहद उस समय पृथ्वी तत्त्व का प्रभाव िो, तो ग़्राव उसकी पीठ पर िोंगें; यहद िल तत्त्व का प्रभाव िो, तो ग़्राव उसके पैर पर; यहद अहि तत्त्व का प्रभाव िो, तो सीने पर ग़्राव िोंगें; यहद वायु तत्त्व प्रिान िोगा, तो बााँि पर ग़्राव िोंगें तथा यहद आकाि तत्त्व प्रिान िोगा, तो ग़्राव हसर पर िोगा। यहद मिाहवष्णु भी स्वयं उस योिा की रक्षा ितु आ िायें, तो भी वि निीं ंबच सकता।

वायु की हदिा से अहि की हदिा को िोने वाली एक रेखा खीचंने पर तथा पहश्चम और दहक्षण को चन्द्रमा का क्षेत्र मान कर तथा उत्तर एवं पूवथ को सूयथ का क्षेत्र मान कर यहद योिा सूयथ नािी चलते समय स्वयं को सूयथ क्षेत्र में रखे और अपने ितुरु को चन्द्रमा के क्षेत्र में रख कर युि करे, तो वि हनस्सन्देि हवियी िोगा। यहद पृथ्वी तत्त्व प्रिान िो, तो उसका िस्त्र चाकू िोना चाहिए; यहद िल तत्त्व प्रिान िो, तो उसका िस्त्र तलवार िोना चाहिए; यहद अहि िो, तो िस्त्र िनुि िोना चाहिए; यहद वायु तत्त्व प्रिान िो, तो छिी तथा यहद आकाि तत्त्व प्रिान िो, तो उसका िस्त्र पत्थर िोना चाहिए।

रोगों ंके हलए

यहद रोगी पुरुि िै तथा यहद सन्देि हकसी पुरुि िारा भेिा गया िै और प्रश्न स्वर योगी के दाहिनी ओर से हकया गया िै, तो रोग सरलता से ठीक िो िायेगा। यहद पुरुि रोगी ने हकसी स्त्री सन्देिवाहक को भेिा िै और प्रश्न योगी के बायीं ओर से हकया गया िै, तो रोग पुनः प्रकट िोगा। यिी हनयम स्त्री रोगी के हलए िै। रोग कब ठीक िोगा, वि उस क्षण िो तत्त्व प्रिान िै, उस पर हनभथर करता िै। यहद पृथ्वी तत्त्व प्रिान िै, तो रोग देरी से अच्छा िोगा; यहद िल तत्त्व प्रिान िै, तो रोग िीघ्र अच्छा िोगा; यहद अहि तत्त्व प्रिान िै, तो तीन हदन में ठीक िोगा तथा यहद आकाि तत्त्व प्रिान िै, तो उसी हदन रोग ठीक िो िायेगा।

यहद प्रश्न के समय सुिुम्ना नािी चल रिी िै, तो रोगी ५ हदनों ंमें मृत्यु को प्राप्त िोगा।

मात्र गुरु की कृपा से हकसी को यि ज्ञान िो सकता िै हक पृथ्वी प्रभाहवत श्वास में िल या अहि या वायु अथवा आकाि की प्रिानता पिचानी िा सकती िै। पृथ्वी तथा िल का प्रभाव अच्छा िै।

नािी को कैसे चलना चाहिए

नािी का परीक्षण सूयोदय से दो िण्टे पूवथ करना चाहिए। इसके बाद िुक्ल पक्ष की प्रथमा, हितीया और तृतीया को चन्द्र नािी चलनी चाहिए। इसे हबना पररवहतथत हुए दो िण्टे तक हनरन्तर चलना चाहिए। रहववार, मंगलवार, गुरुवार तथा िहनवार को सूयथ नािी चलनी चाहिए तथा िेि हदनों ंचन्द्र नािी चलनी चाहिए। िब पूवाथ, उत्तरा, िस्त, हचत्रा, स्वाहत, हविाखा, अनुिा, ज्येष्ठा, मूल, रोहिणी, ितहभिा अथवा उत्तरा भािा नक्षत्र िो, तो सूयथ नािी चलनी चाहिए तथा अन्य पन्दरि नक्षत्रों ंमें चन्द्र नािी चलनी चाहिए। यहद श्वास हवपरीत नासा-रन्ध्र में प्रवाहित िोती िै, तो बहुत-सी कहठनाइयााँ आती िैं; लेहकन िो भगवान् हिव की सुतुहत करते िैं और उनमें पूणथ आथथा रखते िैं, उनके सामने कोई कहठनाई निीं ंआती।

यहद िुक्ल पक्ष में गुरुवार को चन्द्र नािी चले तथा कृष्ण पक्ष में गुरुवार को सूयथ नािी चले, तो अच्छे पररणाम िोंगें। यहद हकसी के साथ सदा ऐसा िोता िै, तो वि िीवनुमुि िोगा। हकसी िहनवार को राहत्र में तथा हदन में यहद सूयथ नािी से चन्द्र नािी में पररवतथन न िो अथवा इसके हवपरीत िो, तो वि बहुत प्रहसि िो िाता िै।

यहद प्रश्नकताथ हकसी के बारे में प्रश्न करे हक वि इस समय किााँ िै। और यहद इस समय पृथ्वी तत्त्व का प्रभाव िै, तो वि इस समय र्र पर िोगा, यहद िल तत्त्व का प्रभाव िै, तो वि बरामदे में िै; यहद अहि तत्त्व प्रमुख िै, तो वि गााँव की सीमा में िै; यहद वायु तत्त्व प्रमुख िै, तो वि र्िपिी के ऊपर िै तथा यहद आकाि तत्त्व प्रमुख िै, तो वि सोया हुआ िै। यहद प्रश्न दूर गये व्यन्दि के बारे में िै, तो उत्तर िोना चाहिए: (१) पृथ्वी-वि गााँव में िी िै, (२) िल-वि वापस आ रिा िै, (३) अहि-वि हनरन्तर चल रिा िै, (४) वायु-वि अपने गृि-थथान को वापस आ रिा िै, तथा (५) आकाि-२४ हमनट में वि अपने र्र में िोगा।

यहद हकसी की श्वास िरीर में अविोहित िो िाये और नाहसका में आये–िाये निीं, तो उसकी मृत्यु निीं िोती। इस समय मन आहद कायथ निीं करते तथा गहतिीन िो िाते िैं और इस समय यम से भय समाप्त िो िाता िै। पृथ्वी तत्त्व का प्रभाव िेढ़ नाहलका (३६ हमनट), िल का प्रभाव सवा नाहलका (३० हमनट), अहि का प्रभाव १ नाहलका (२४ हमनट), वायु का प्रभाव आिी नाहलका (१२ हमनट) और आकाि का ३/४ नाहलका (१८ हमनट) िोता िै। एक नासा-रन्ध् में श्वास की पूणथ अवहि ५ नाहलका अथवा २ र्ण्टे िै। यहद इस समय आकाि तत्त्व में कमी अथवा वृन्दि िो, तो यि िाहनकारक िै।

मास के अन्दन्तम हदन योगी को मात्र एक समय भोिन लेना चाहिए हिससे िरीर और मन की िुिता िोती िै। 'Tai (Makara)' की प्रथमा को उसे सूयोदय से दो र्ण्टे पूवथ श्वास का परीक्षण करना चाहिए तथा पूरे दो र्ण्टे तक बायााँ स्वर चलने देना चाहिए। इसके पश्चात् उसे एकान्तर से प्रहत दो र्ण्टे के अन्तराल से प्रत्येक नाहसका में श्वास का प्रवाि पररवहतथत करते रिना चाहिए और 'Adi (Karkataka)' माि की प्रथमा को सूयोदय से दो र्ण्टे पूवथ उसे दायााँ स्वर चलना चाहिए तथा 'Makara' की प्रथमा तक यि भी बाद में देखते रिना चाहिए हक यि क्रमि: दायें से बायें नासा-रन्ध् में प्रत्येक में दो-दो र्ण्टे चलता रिे। यहद वि ऐसा करता रिे, तो वि एक सौ वषथ तक हियेगा।

िो व्यन्दि उपररहलन हनयम का पालन करता िै, उसे िब बायााँ स्वर चल रिा िो, तब भोिन लेना चाहिए तथा गरम, नमकीन, क्षारवा तथा तीखा भोिन लेते समय िल निीं पीना चाहिए। उसे र्ी, दूि, खट्टी, मीठी वस्तुएाँ िब सूयथ नाड़ी चले, उस समय लेनी चाहिए और इस समय वि िल भी पी सकता िै। यहद इस प्रकार भोिन हकया िाये, तो िी वि लाभदायक िोता िै, अन्यथा निीं।

िो स्वर योग की सािना करता िै, उसके साथ कभी कुछ गलत निीं िो सकता।

स्वर योग में प्रवीण योगी के बारे में ज्ञानी िन अनेक आश्चयथिनक बातें बतलाते िैं। यहद ऐसा योगी उस समय सूयथ के सामने खड़ा िो, िब उसकी छाया न तो ५ फीट से छोटी िो और न िी १० फीट से अहिक लम्बी, तथा वि िरीर को हिलाये हबना छाया के गले, िाथों अथवा पैरों पर त्राटक करे तथा तत्क्षण आाँखें बन्द हकये हबना स्वच्छ आकाि में अपनी छाया देखे-यहद यि छाया स्वहणथम रंग की िै, तो उसे सोना प्राप्त िोगा। यहद छाया श्वेत रंग की िै, तो उसे मृत्यु से िरने की कोई आवश्यकता निीं िै, उसके िीवन-काल में वृन्दि िो िायेगी। यहद वि लाल छाया देखे, तो उसका िीवन-काल कम िो िायेगा। यहद वि काली छाया देखे, तो क्षय प्रारम्भ िोगा। यहद वि हसर निीं देख पाता िै, तो वि तीन माि में मृत्यु को प्राप्त िोगा। िो इस प्रकार बारि वषों तक अपनी छाया को देखने का अभ्यास करे, तो स्वयं उसकी छाया उससे बात करने लगती िै और हफर उसे अष्ट हसन्दियााँ प्राप्त िोती िैं। कुछ वषों बाद यि छाया एक पुरुष का आकार - ले लेती िै और वि ििााँ भी िाता िै, उसके साथ िाती िै; ििााँ वि लेटता िै, उसके साथ लेटती िै; िब वि िागेगा, वि िागेगी और भहवष्य में िो भी उसके साथ भला या बुरा िोने वाला िोगा, वि पिले िी बता देगी। िो व्यन्दि सूयथ के प्रकाि में िल को थूकता िै और उसमें इन्द्रिनुष के रंगों को देखता िै, वि एक वषथ तक मृत्यु को प्राप्त निीं िोता। यहद तााँबे के बतथन में हिसमें र्ी भरा

ों, उसमें ो पूणथ चन्द्र अथवा सूयथ का प्रहतहबम्ब देख सकता ै, तो उसके पररणाम हनम्नानुसार ोंगें -यहद श्वेत छाया हदखायी देती ै, तो अच्छा ै; यहद यि पीली हदखायी दे, तो यि बुरा ै; यहद रे रंग की छाया हदखायी दे, तो
इसका पररणाम रोग ोगा। यहद प्रहतहबम्ब काला हदखायी दे, तो मृत्यु हनहश्चत ै। यहद छाया का दहक्षणी भाग बायें भाग से छोटा ो, तो मृत्यु हनहश्चत ी छि मि में आयेगी तथा यहद पूवी भाग छोटा हदखायी दे, तो मृत्यु एक मि में आयेगी और यहद मध्य में एक छेद हदखायी दे, तो मृत्यु दस हदन में आयेगी।
यहद ाथ, पैर, माथा अथवा ठुिी में फ़िकन ो, तो यि इस बात का संकेत ै हक मृत्यु-काल सहन्नकट ै।
यहद हसर में फ़िकन ै, तो मृत्यु एक विथ में ोगी; यहद पैर में फ़िकन ो, तो मृत्यु छि मि में ोगी। यहद माथे में फ़िकन ै, तो मृत्यु तीन मि में ोगी। यहद ठुिी में फ़िकन ै, तो मृत्यु दस हदन में ोगी। यहद कानों ंकी सुनने की न्दि कम ो गयी ो, तो सात हदन में मृत्यु ोगी। यहद नेत्रों ंकी ज्योहत कम ो गयी ो, तो मृत्यु पााँच हदन में ोगी; यहद घ्राण न्दि चली गयी ो, तो मृत्यु तीन हदन में तथा यहद वाक् न्दि चली गयी ो, तो मृत्यु दो हदन में ोगी।

भीतर आने वाली तथा बिर ाने वाली श्वास

बिर ाने वाली श्वास हिव ै और भीतर आने वाली श्वास न्दि ै। उच्छवसन हवि ग्रिण करने के समतुल्य तथा अन्तुः श्वसन अमृत-पान के समान ै। ब मनुष्य श्वास भीतर लेता ै, तब उसकी कामनाएाँ पूणथ ोती ैं। कुम्भक के समय भीतर हलया गया हवि अपना मारक गुण खो देता ै। यहद प्रश्नकताथ के प्रथम ब्द के अक्षर हविम संख्या में ैं, तो वि हिव का रूप ै और यहद सम ैं, तो वि न्दि का रूप ै। यहद गुम गये व्यन्दि की वापसी के बारे में प्रश्न ै और यि अन्तुःश्वसन के समय हकया गया ै, तो उत्तर नकाराक ोगा। यहद रोग ठीक ोने के सम्बि में प्रश्न हकया गया ै, तो उसका उत्तर इस प्रकार ो गा-अन्तुःश्वसन के समय सकाराक और (ााँ) उच्छवसन के हलए नकाराक (निीं) ं।

स्वरों ंारा पररणाम के संकेत

अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ स्वरों ंको चार भागों ंमें बााँटा गया ै। ैसे अ, आ बालक वगथ में; इ तथा ई युवा वगथ में; उ, ऊ सम्राट् वगथ में तथा ेि वृ वगथ में। यहद योिा के नाम का प्रथम ब्द ै अ अथवा आ ों, तो इसे ला ब्द से ो देंगे (आला बनाने के हलए); यहद यि इ तथा ई ै, तो उसे हलली बनाने के हलए ली से संयुि करना चाहिए; यहद यि उ, ऊ ै, तो इसे उलु बनाने के हलए लु से संयुि करना चाहिए, और हफर योिा को बालक या युवा या रािा की भााँहत माना ाना चाहिए। ऐसा किा ायेगा हक युवा बालक को पराहित करेगा तथा रािा युवक को पराहित करेगा। वृ व्यन्दि अन्यों ंारा पराहित हकया ायेगा।

बि पृथ्वी का प्रभाव चन्द्र निा़ी में ो, तो मन्दन्दर में प्रवेि करना, दीवार अथवा र बनवाना या नवीन गृ अहिग्रहित करना, पहवत्र कमथकाण्ड करना अथवा वृक्षारोपण करना ुभ ै। यहद ल का प्रभाव ै तो तालाब खुदवाना, निर थथाहपत करना, खेत ोतना, बीि बोना, हववाि करना ुभ ै। यहद अहि तत्त्व प्रिान ै, तो रोहगयों ं का उपचार प्रारम्भ हकया ा सकता ै। यहद वायु तत्त्व प्रिान ै, तो व्यन्दि ुसवारी कर सकता ै, कार चला सकता ै अथवा सम्िी यात्रा कर सकता ै। यहद आकाि तत्त्व प्रिान ै, तो प प्रारम्भ करना और तीरन्दािी करना लाभदायक ै।

यिी हनयम सूयथ नाड़ी के साथ भी लागू िोते िैं। िो इस स्वर हवज्ञान में दक्ष िोते िैं, उन्हें ब्राह्मण की भाँहत आदर हदया िाना चाहिए, देवों ंकी भाँहत उनका सम्मान हकया िाना चाहिए। वे सायुज्य मुन्दि के अहिकारी िैं। िो इस स्वर योग की हिक्षा श्रेष्ठ गुरु से प्राप्त करता िै, वि स्वयं िी हिव बन िाता िै।

अध्याय १०
मन का क्रमिुः ऊर्ध्ाथरोण

मिारे िरीर में न्दथथत चक्र िन्दि के केन्द्र िैं। ये प्राण िन्दि के केन्द्र िैं िो िीहवत िरीर में प्राण वायु िारा प्रकट िोते िैं। इनके अहिष्ठाता देवों ंके नाम उस हवश्व-चेतना पर आिाररत िैं िो इन केन्द्रों ंके रूप में प्रकट िोती िै। ये चक्र थथूल इन्दन्द्रयों ंको निीं ंहदखायी देते । ये मात्र िीहवत िरीर में िी हदखायी देते िैं और िरीर के मृत िो िाने पर उसके हवखण्डन के साथ िी अदृश्य िो िाते िैं।

मन की िुिता से योग में पूणथता प्राप्त िोती िै। िब आप अन्यों ंके साथ व्यविार करें, अपना व्यविार सिी करें। सिनिील बनें। पाहपयों ंसे घृणा न करें। सभी पर दया करें। यहद आप अपनी अहिकतम ऊिाथ योगाभ्यास में लगायेंगे, तो आपकी प्रगहत िीघ्र िोगी। आपमें मोक्ष िेतु प्रबल लालसा तथा तीव्र वैराग्य भी िोना चाहिए। आपको लगनिील और दृढ़ संकल्पवान् िोना चाहिए। गिन तथा हनरन्तर ध्यान समाहि में प्रवेि िेतु आवश्यक िै।

सांसाररक मनुष्य का मन मूलभूत कामनाओं ंऔर वासनाओं ंके साथ मूलािार और स्वाहिष्ठान चक्र में भटकता रिता िै।

यहद हकसी का मन िुि िो िाये, तो यि महणपूर चक्र में पहुँच िाता िै हिससे उसे कुछ िन्दि और आनन्द का अनुभव िोता िै।

यहद मन और अहिक िुि िो िाता िै, तो यि अनाित चक्र तक उन्नत िो िाता िै और उसे आनन्द का अनुभव िोता िै तथा उसे इष्टदेवता के देदीप्यमान स्वरूप के दिथन िोते िैं।

िब मन अत्यहिक िुि िो िाता िै, तब ध्यान तथा भन्दि प्रबल िो िाती िै और इस श्रेष्ठ मन का उत्थान हविुि चक्र तक िो िाता िै और अब उसे अहिकाहिक िन्दि तथा आनन्द का अनुभव िोता िै। इस चक्र तक पहुँचने के बाद भी इसके हनम्न चक्रों ंपर आने की सम्भावना िोती िै।

िब योगी आज्ञा चक्र पर पहुँचता िै, तो उसे समाहि प्राप्त िोती िै और वि परमात्मा अथवा ब्रह्म का साक्षात्कार करता िै।

िब वि मन्दस्तष्क में न्दथथत आध्यान्दिक केन्द्र सिस्रार चक्र में पहुँचता िै, तो योगी को हनहवथकल्प समाहि परम चेतनावथथा प्राप्त िोती िै। वि अिैत ब्रह्म के साथ एक िो िाता िै। यि चेतना का सवोच्च िरातल अथवा परम असम्प्रज्ञात समाहि िै। अब कुण्डहलनी हिव से एक िो िाती िै।

योगी हवद्याहथथयों ंको ज्ञान प्रदान करने तथा अन्यों ंके कल्याण िेतु हविुि चक्र में वापस आ सकता िै।

अध्याय ११

कुण्डहलनी िागरण िोने पर अनुभव

कुण्डहलनी िागरण िोने पर आपको हदव्य दिथन िोते िैं; हदव्य सुगन्दि, हदव्य स्वाद तथा हदव्य स्पिथ का अनुभव िोता िै। आपको हदव्य अनादत नाद सुनायी देता िै। आपको प्रभु से हदि-हनदेि प्राप्त िोते िैं। ये सभी इस बात के संकेत िैं हक आपके भीतर कुण्डहलनी िन्दि िाग्रत िै। िब मूलािार में स्पन्दन िो, रोयें खड़े िो िायें, स्वयं िी उहियान, िालंिर और मूल बंि लग िायें, तो िानें हक कुण्डहलनी िाग्रत िै।

िब श्वास हबना हकसी प्रयत्न के रुक िाये, िब हबना प्रयत्न के स्वयं केवल कुम्भक लग िाये, तो िानें हक कुण्डहलनी िाग्रत िै। िब आपको ऐसा अनुभव िो हक प्राण िन्दि सिस्रार की ओर उठ रिी िै, िब आपको आनन्द का अनुभव िो तथा िब आप यान्दिक रूप से ॐ का उच्चारण करने लगें, िब मन tilde 7 संसार के कोई हवचार न िों, तो िाहनए हक कुण्डहलनी िन्दि िाग्रत िै।

बि ध्यान में नेत्र हत्रकुटी पर न्दथथर िों, ं िब िाम्भवी मुिा लग िाये, तो िानें हक कुण्डहलनी हक्रयािील िै। बि आप िरीर के भीतर हवहभन्न भागों ंमें प्राणों ंके स्पन्दनों ंका अनुभव करें, िब आपको हवद्युत् के झटकों ंकी तरि झटकों ंका अनुभव िो, तो िानें हक कुण्डहलनी िन्दि िाग्रत िो गयी िै। यहद आपको ऐसा अनुभव िो हक
रीर िै िी निीं, ं िब आपकी आँखें बन्द िो िायें और प्रयत्न करने पर भी न खुलें, िब हवद्युत् िैसी तरंगें नाहड़यों ं
बि आप औरन्नीचे, प्रविाहित आपको अन्तःप्रेरणा और अन्तर्दृष्टि प्राप्त िो, िब प्रकृहत आपके सामने अपने रिस्य अनावृत करें, सभी सन्देि अदृश्य िो िायें, आप वेदों ंके अथथ को स्पितया समझ लें, तो िानें हक आपकी कुण्डहलनी िाग्रत िै। िब आप वायु की भााँहत िलके िो िायें, िब व्यग्र करने वाली न्दथथहत में आपका मन सनुतुहलत रिे, िब आपके भीतर कायथ करने के हलए अक्षय ऊिाथ िो, तो िानें हक कुण्डहलनी िाग्रत िै।

बि आपको दैवी उन्माद प्राप्त िो तथा िब आपमें िन-समूि के मध्य व्याख्यान देने की िन्दि का हवकास िो, तो िानें हक कुण्डहलनी हक्रयािील िै। िब आप स्वयं िी हबना हकसी कि तथा थकान के अनुभव के हवहभन्न आसन करने लगें, तो िानें हक कुण्डहलनी हक्रयािील िो गयी िै। िब आप सुन्दर श्रेष्ठ भिन, सुतुहतयों, ं कहवताओं ंआहद की स्वयं िी रचना करने लगें, तो िाहनए हक कुण्डहलनी हक्रयािील िो गयी िै।

योगी अमृत का पान करता िै

नाहभ के नीचे अहि मण्डल िै, हृदय के भीतर और ऊपर सूयथ मण्डल िै। हसर के भीतर और ऊपर चन्द्रमा का क्षेत्र चन्द्र मण्डल िै।

योगी के मन्दस्तष्क चन्द्र मण्डल से बहुत अहिक मात्रा में अमृत झरता िै। योगी इसे अपने संथथान में अविोहित कर लेता िै और हबना कोई भोिन अथवा पेय ग्रिण हकये अनन्त काल तक िीहवत रिता िै।

वि अमृत िो हसर में न्दथथत चन्द्र मण्डल से ररसता िै, उसे नाहभ मण्डल में न्दथथत अहि मण्डल िारा उपयोग में ले हलया िाता िै। लेहकन सवाांग आसन तथा हवपरीतकरणी मुिा के अभ्यास से यि अमृत सारे िरीर का पोिण करता िै। इसहलए इनका अभ्यासी दीर्ाथयुष्य प्राप्त करता िै। िीिाथसन और सवाांगासन में अहि मण्डल उलटा िो िाता िै, इस कारण अहन में अमृत निीं ंपहुँच पाता और अहि इसका उपभोग निीं ंकर पाती।

पररहि
हिव-स्वरोदयम्

मिेश्वरं नमसृकृत्य िैलिां गणनायकम् ।
गुरुं च परमिाानं भिे संसारतारणम् ॥१ ॥

देवुयुवाच

देवदेव मिादेव कृपां कृत्वा ममोपरर।
सवथहसन्दिकरं ज्ञानं कथयस्व मम प्रभो ॥२॥

कथं ब्र्ह्मण्डमुत्पन्नं कथं वा पररवतथते ।
कथं हवलीयते देव वद ब्र्ह्माण्डहनणथयुः ॥ ३ ॥

ईश्वर उवाच

तत्त्वाद्ब्रह्माण्डमुत्पन्नं तते्वेन पररवतथते ।
तते्वे हवलीयते देहव तत्त्वाद् ब्र्ह्माण्डहनणथयुः ।।४।।

देवुयुवाच

तत्त्वमेव परंमूलं हनहश्चतं तत्त्ववाहदहभुः ।
तत्त्वस्वरूपं हंकं देव तत्त्वमेव प्रकािय ॥५ ॥

ईश्वर उवाच

हनरञ्जनो हनराकार एको देवो मिेश्वरुः ।
तस्मादाकािमुत्पन्नमाकिािाायुसंभवुः ॥६ ॥

वायोसे्तिस्ततश्चापस्ततुः पृथ्वीसमुद्भवुः ।
एताहन पञ्चतत्त्वाहन हवस्तीणाथहन च पंचिा ॥७॥

तेभ्यो ब्र्ह्माण्डमुत्पन्नं तैरेव पररवतथते ।
हवलीयते च तत्रैव तत्रैव रमते पुनुः ॥८ ॥

पञ्चतत्त्वमये दिे पञ्चतत्त्वाहन सुन्दरर ।
सूक्ष्मरूपेण वतथन्ते ज्ञायन्ते तत्त्वयोहगहभुः ॥९॥

अथ स्वरं प्रवक्ष्याहम िरीरस्य स्वरोदयम् ।
सिचारस्वरूपेण भवेज्ज्ञानं हत्रकालिम् ॥१०॥

गुह्याद्गुह्यतमं सारमुपकारप्रकािनम् ।
इदं स्वरोदयं ज्ञानं ज्ञानानां मस्तके महणुः ॥११॥

सूक्ष्मात्सूक्ष्मतरं ज्ञानं सुबोिं सत्यप्रत्ययम् ।
आश्चयां नान्दस्तके लोके आिारं स्वन्दस्तके िने ॥१२॥

अथ हिष्यलक्षणम् िान्ते िािे सदाचारे गुरुभक्त्यैकमानसे ।
दृढहचत्ते कृतज्ञे च देयं चैव स्वरोदयम् ।।१३।।

दुिे च दुिथने क्रुिे नान्दस्तके गुरुतल्पगे।
हीनसत्त्वे दुराचारे स्वरज्ञानं न दीयते ॥१४॥

शृणु त्वं कहथतं देहव देिस्य ज्ञानमुत्तमम् ।
येन हवज्ञानमात्रेण सवथज्ञत्वं प्रणीयते ॥१५॥

स्वरे वेदाश्च िास्त्राहण स्वरे गािवथमुत्तमम् ।
स्वरे च सवां त्रैलोक्यं स्वरमािस्वरूपकम् ॥१६॥

स्वरिीनश्च दैवज्ञो नाथिीनं यथागृिम् ।
िास्त्रिीनं यथा वक्त्रं हिरिीनं च यिपुः ॥१७॥

नािीभेदं तथा प्राणतत्त्वभेदं तथैव च।
सुिुम्नाहमश्रभेदं च यो िानाहत स मुन्दिगुः ॥१८॥

साकारे वा हनराकारे िुभं वायुबलात्कृतम् ।
कथयन्दन्त िुभं केहचत्स्वरज्ञानं वरानने ॥१९॥

ब्रह्माण्डखण्डहपण्डाद्याः स्वरेणैव हि हनहमथताः।
सृहिसंिारकताथ च स्वरुः साक्षान्महेश्वरुः ॥२०॥

स्वरज्ञानात्परं गुह्यं स्वरज्ञानात्परं िनम् ।
स्वरज्ञानात्परं ज्ञानं न वा दृिं न वा श्रुतम् ॥२१॥

िुरु िन्यात्स्वरबले तथा हमत्रसमागमुः
लक्ष्मीप्रान्दप्तुः स्वरबले कीहतथुः स्वरबले सुखम् ॥२२॥

कन्याप्रान्दप्तुः स्वरबले स्वरतो रािदिथनम् ।

स्वरेण देवताहसन्दि्ः स्वरेण हक्षहतपो वि्ः ॥२३॥

स्वरेण गम्यते दिेो भोज्ं्यं स्वरबले तथा ।
लरु् दीर्थ स्वरबले मलं चैव हनवारयेत् ॥२४॥

सवथिास्त्रपुराणाहद सूमृहतवेदांगपूवथकम् ।
स्वरज्ञानात्परं तत््वं नान्दस्त हंकंहचिरानने ॥ २५ ॥

नामरूपाहदका्ः सवे हमथ्या सवेिु हवभ्रमुः ।
अज्ञानमोहिता मूढा यावत्तत््वं न हवद्यते ॥ २६ ॥

इदं स्वरोदयं िास्त्रं सवथिास्त्रोत्तमोत्तमम् ।
आिर्टप्रकािाथां प्रदीपकहलकोपमम् ॥२७॥

यस्मै कस्मै परस्मै वा न प्रोंं प्रश्नितवे ।
तस्मादेतत्स्वयं ज्ञेयमािनोवाऽऽिनिाहन ॥२८॥

न हतहथनथ च नक्षत्रं न वारो ग्रिदेवता।
न च हवहिव्यथतीपातो वैृत्याद्या स्तथैव च ॥२९॥

कुयोगो नास्त्यतो देहव भहवता वा कथाचन।
प्राप्ते स्वरबिलेिु सवथमेव िुभं फलम् ॥ ३० ॥

दिेमध्ये न्दथथता नाड्यो बहुरूपा्ः सुहवस्तरात् ।
ज्ञातव्याश्च बुिैहनथत्यं स्वदेिज्ञानितवुः ॥३१ ॥

नाहभथथानात्स्कोर्ध्थमंकुरा इव हनगथता्ः ।
हिसप्तहत्रसिस्राहण दिेमध्ये व्यवन्दथथता्ः ॥३२॥

नािीथथा कुण्डलीन्दिभुथिङ्गाकारिाहयनी।
ततो दिोर्ध्थगा नाड्यो दिैिा्ः प्रहतहष्ठता्ः ॥३३॥

िि हतयथग्गते नाड्यो चतुहवंहितसंख्यया ।
प्रिाना दि नाड्यस्तु दि वायुप्रवािका्ः ॥३४॥

हतयथगूर्ध्ाथस्तथा नाड्यो वायुदेिसमन्दन्वता्ः ।
चक्रवत््संन्दथथता दिे सवाथुः प्राणसमाहश्रता्ः ॥३५॥

तास मध्ये दि श्रेष्ठा दिानां हतस्र उत्तमा्ः ।
इिा च हपङ्गला चैव सुिुम्ना च तृतीयका ॥ ३६ ॥

गािारी िन्दस्तहिह्वा च पूिा चैव यिन्दस्वनी।
अलम्बुिा कुहचैव िङ्न्दखनी दिमी तथा ।। ३७ ।।

इ्डा वामे न्दथथता भागे हपङ्गला दहक्षणे सूमृता ।
सुिम्ना मध्यदिे तु गाािरी वामचकुषुहि ॥३८॥

दहक्षणे ि्न्दस्तहिह्वा च पूिा कणे च दहक्षणे ।
यिन्दस्वनी वामकणे आनने चाप्यालमुिबा ॥३९॥

कुहश्च हलङ्गदिे तु मूलथथाने तु ि्ङ्न्दखनी ।
एवं िारं समाहश्रत्य हतष्ठन्दन्त दि नाहिकाः ॥४०॥

हपङ्गलिा सुिम्ना च प्राणमागे समाहश्रताः ।
एता हि दिनाड्यसुतु दिेमध्ये व्यवन्दथथताः ॥४१ ॥

नामाहन नाहिकानां तु वातानां तु वदाम्यिम् ।
प्राणोऽपानुः समानश्च उदानो व्यान एव च ॥४२॥

नागुः कूमोऽथ कृकलो देवदत्तो िनञ्जयुः ।
हृहद प्राणो वसेहन्नत्यमपानो गुदमण्डले ॥४३ ॥

समानो नाहभदिे तु उदानुः कण्ठमध्यगुः।
व्यानो व्यापी िरीरेिु प्रिाना दि वायवुः ॥४४॥

प्राणाद्या पञ्च हवख्याता नागाद्याः पञ्च वायवुः ।
तिेामहप च पञ्चानां थथानाहन च वदाम्यिम् ॥४५॥

उद्गारे नाग आख्यातुः कूमथ उन्मीलने सूमृतुः ।
कृकलुः कुषुतकृज्ज्ञेयो देवदत्तो हविृम्भणे ॥४६॥

न ििाहत मृतं वाहप सवथव्यापी िनंियुः ।
एते नाहििु सवाथसु भ्रमन्ते िीवरूहपणुः ।॥४७॥

प्रकटं प्राणसंचारं लक्षयेदे्दिे मध्यतुः ।
इ्डाहपङ्गलासुिम्नाहभनाथिीहभन्दस्तसृहभबुथिुः ॥४८॥

इ्डा वामे च हवज्ञेया हपङ्गला दहक्षणे सूमृता ।
इ्डा हनिाी न्दथथतावामा ततो व्यस्ता च हपङ्गला ॥४९॥

इ्डायां तु न्दथथतश्चन्द्रुः हपङ्गलायां च भास्करुः ।
सुिम्ना िमुभुरूपेण िमुभिुथसस्वरूपतुः ॥५०॥

किारो हनगथमे प्रिोुः सकारेण प्रवििेनम् ।
किारुः हिवरूपेण सकारुः ि्न्दिरुच्यते ॥५१॥

िन्दिरूपुः न्दथथतश्चन्द्रो वामनिाीप्रविाकुः ।
दक्षनिाीप्रविाश्च िमुभुरूपो हदवाकरुः ॥५२॥

श्वासे सकारसंथथे तु यद्दानं दीयते बुिैः ।
तद्दानं िीवलोकेऽन्दस्मन् कोहटकोहटगुणं भवेत् ॥५३॥

अनेन लक्षयेद्योगी चैकहचत्तुः समाहितुः ।
सवथमेव हविानीयान्मागे वै चन्द्रसूयथयोुः ॥५४॥

ध्यायेत्ततंत्वं न्दथथरे िीवे अन्दथथरे न कदाचन ।
इहिसन्दिभथवेत्तस्य मिालाभो ियस्तथा ॥५५ ।।

चन्द्रसूयथसमभ्यासं ये कुवथन्दन्त सदा नराुः ।
अतीतानागतज्ञानं तेिां िस्तगतं भवेत् ॥५६॥

वामे चामृतरूपा स्याज्जगदाप्यायनं परम् ।
दहक्षणे चरभागेन िगदुत्पादयेस्तदा ॥५७॥

मध्यमा भवहत क्रूरुरा दुिा सवथत्र कमथसु।
सवथत्र िुभकायेिु वामा भवहत हसन्दिदा ॥५८॥

हनगथमे िुभा वामा प्रविे दहक्षणा िुभा।
चन्द्रुः समुः सुहवज्ञेयो रहवस्तु हविमुः सदा ॥५९॥

चन्द्रुः स्त्री पुरुिुः सूयथश्चन्द्रो गौरोऽहसतो रहवुः ।
चन्द्रनािीप्रविेिे सौम्यकायाथहण कारयेत् ॥६०॥

सूयथनािीप्रविेिे रौद्रकायाथहण कारयेत् ।
सुिुम्नायाुः प्रविेिे भुन्दक्तमुन्दक्तफलाहन च ॥६१ ॥

आदौ चन्द्रुः हसते पक्षे भास्करो हि हसतेतरे।
प्रहतपत्तो हदनान्याहुस्त्रीहण त्रीहण कृतोदया ।।६२ ।।

सािथहिहटके ज्ञेयुः िुक्ले कृष्णे िािी रहवुः ।
विेत्येकहदनेनैव यथा िहिनािीुः क्रमात् ॥६३॥

विेयुस्तिटीमध्ये पञ्चतत्त्वाहन हनहदथिेत् ।
प्रहतपत्तो हदनान्याहुहवथपरीते हविथयेत् ॥६४॥

िुक्लपक्षे भविेामा कृष्णपक्षे च दहक्षणा।
िानीयात्प्रहतपतूपूवां योगी तद्यतमानसुः ॥६५ ।।

िििके वारयेत्रौ हदवा वारय भास्करम् ।

इत्यभ्यासरतो हनतं्यं स योगी नात्र संयिुः ॥६६॥

सूयेण बध्यते सूयथश्चन्द्रश्चने्द्रेण बध्यते ।
यो िानाहत हक्रयामेतां तै्रैलोक् विगं क्षणात् ॥६७॥

उदयं चन्द्रमागेण सूयेनास्तमनं यहद ।
तदा ते गुणसंिाता हवपरीतं हवविथयेत् ॥६८॥

गुरुिुक्रबुिेन्दूनां वासरे वामनाहिका ।
हसन्दिदा सवथकायेिु िुक्लपक्षे हविेितुः ॥६९॥

अकाथङ्गारकसौरीणां वासरे दक्षनाहिका ।
स्मत्तथव्या चरकायेिु कृष्णपक्षे हविेितुः ॥७० ॥

प्रथमं विते वायुहिथतीयं च तथानलुः ।
तृतीयं विते भूहमश्चतुथां वारुणो विेत् ॥७१ ॥

सािथहिहटके पञ्च क्रमेणैवोदयन्दन्त च।
क्रमादेकेकनाड्यां च तत्त्वानां पृथगुद्भवुः ॥७२ ॥

अौरात्रस्य मधे्ये तु जे्ञेया िादिसंक्रमािुः ।
वृिककथटकन्याहलमृगमीना हनिाकरे ॥७३ ।।

मेिहसंिौ च कुम्भश्च तुला च हमथुनं िनम् ।

उदये दहक्षणे जे्ञेयुः िुभािुभहवहनणथयुः ।॥७४ ।।

हतष्ठेतूपूवोत्तरे चन्द्रो भानुः पहश्चमदहक्षणे।
दक्षनाड्यािुः प्रसारेतु न गचे्छेद्याम्यपहश्चमे ॥७५ ॥
वामचारप्रविो तु न गचे्छेतूपूवथ उत्तरे।
पररपन्दन्थभयं तस्य गतोऽसौ न हनवत्तथते ॥ ७६ ॥

तत्र तस्मान्न गन्तव्यं बुिैुः सवथहितैहिहभुः ।
तदा तत्रा तु संयाते मृतु्युरेव न संियुः ॥७७॥

िुक्लपक्षे हितायायामके विहत चन्द्रमािुः।
दृश्यते लाभदुः पुंसां सौमे्य सौख्यं प्रिायते ॥७८ ॥

सूयोदये यदा सूयथश्चन्द्रश्चन्द्रोदये भवेत् ।
हसध्यन्दन्त सवथकायाथहण हदवाराहत्रगतान्यहप ।।७९ ॥

चन्द्रकाले यदा सूयां सूयथश्चन्द्रोदये भवेत् ।
उिेगुः कलिो िाहनुः िुभं सवां हनवारयेत् ॥८०॥

सूयथस्य विो प्रवदन्दन्त हवज्ञा ज्ञानं ह्यगम्यस्य तु हनश्चयेन।
श्वासेन यिुस्य तु ीत रशेु: प्रविाकाले फलमन्यथा स्यात् ८१।।

अथ डवपरीतलक्षणम्

यदा प्रतूयूिकालेन हवपरीतोदयो भवेत् ।
चन्द्रथथाने वित्यको रहवथथाने च चन्द्रमाु: ॥८२॥

प्रथमे मनउिगं िनिाहनहितीयके ।
तृतीये गमनं प्रिोहमिनिां चतुथथके ॥८३॥

पञ्चमे राज्यहवर्ंधसं िषेठे सवाथथनािनम् ।
सप्तमे व्याहिदुःखाहन अिमे मृतुयुमाहदिेत् ॥८४॥

कालत्रये हदनान्यिौहवपरीतं यदा विेत् ।
तदा दिुफलंप्रिो हंकंहचनून्यूनं तु िोभनम् ॥८५॥

प्रातमथध्याह्नयोश्चन्द्रु: सायंकाले हदवाकरु: ।
तदा हनतंयं ियो लाभो हवपरीतं हवविथयेत् ॥८६॥

वामे वा दहक्षणे वाहप यत्र संक्रमते हिवु: ।
कृत्वा तत्पादमादौ च यात्रा भवहत हसन्दिदा ॥८७॥

चन्द्रु: समपदु: कायों रहवसुतु हविमु: सदा ।
पूणथपादं पुरसूकृत्य यात्रा भवहत हसन्दिदा ॥८८॥

यत्रांगे विते वायुस्तदंगकरसंतलात् ।
सुप्तोत्थतो मुखं सूपृषवा लभते वान्दितं फलम् ॥८९॥

परदतेते तथा ग्राहेये गिृहन्नगथमनेऽहप च।
यदंगे विते निाी ग्राहूयं तेन करांहघ्रणा ॥९० ।।

निाहनु: कलिो नैव कण्टकैनाथहप हभद्यते।
हनवतथते सुखी चैव सवोपिववहिथतु: ॥९१ ।।

गुरुबिुनृपामातेयेष्वनेयिु िभदाहयनी।
पूणाांगे खलु कत्तथव्या कायथहसन्दिमथनु: न्दथथता ॥९२ ॥

अहिचोरिामाथिमाथ अनेयिां वाहदहनग्रिु: ।
कत्तथव्याु: खलु ररिायां ियलाभसुखाहथथहभु: ।॥९३॥

दूरदिे हविातव्ं्यं गमनं तु हिमद्युतौ ।
अभ्यणथदिे दीपे्ते तु करणाहवहतकेचन ॥९४॥

यन्द्वं्कहचतू्पूवथमुहद्दिं लाभाहदसमरागमुः ।
तत्सवां पूणथनिगिु ि्ायते हनहवथकल्पकम् ॥९५॥

नू्यिनाड्या हवपयथस्ं्तं यतू्पूवां प्रहतपाहदतम् ।
ग्ायिते नान्यथा चैव यथा सवथज्ञभाहितम् ॥९६॥

व्यविारे खलोच्चाटे ि्ेहहवद्याहदवश्चके ।
कुहपतस्वाहमचोरादे्ये पूणथथा:सु्युभथयंकरािुः ॥९७॥

दूराध्र्वन ि्ुभश्चन्द्रो हनहवथघ्ो ऽभीहसन्दिदुः ।
प्रविेकायथ ि्ेतौ च सूयथनिगिी प्रिस्यते ॥९८॥

अयोगे्ये योग्यता नाड्या योगथथानेप्ययोग्यता ।
कायाथनुवन्दिनी ि्ीव यथा रुिथथता चरेत् ॥९९॥

चन्द्रचारे हवियते सूयो बहलविंनयेत् ।
सुिम्नायां भवेन्मोक्ष एको देवन्दस्त्रथा न्दथथतुः ॥१००॥

ु्भान्युभकायाथहण हक्रयन्ते्ते ऽहिनिं यदा।
तदाकायाथनुिरीन कायां निगिप्रचालनम् ॥१०१ ॥

अथ इ्डा
न्दथथरकमथण्यलंकारे दूराध्र्वमने तथा ।
आश्रमे ि्मथप्रसादे वसूतूनां संग्रिे ऽहप च ॥ १०२ ॥
वापीकूपतिागादेुः प्रहतष्ठास्ं्तंभदेवयोुः ।
यात्रादान हविवो च वस्त्रालंकारभूिणे ॥१०३ ॥

ग्ान्दिन्तकेपौहष्टके चैव हदव्योहिरसायने ।
स्वस्वाहमदिथने हमते्रे वाहणज्ये कणसंग्रिे ॥१०४ ॥

गृिप्रविे सेवायां कृिौ च बीवापने।
ु्भकमाथहण संिौ च हनगथमे च ि्ुभुः ि्ीि ॥१०५ ॥

हवद्यारम्भाहदकायिेु बािवानां च दिथने।
न्मिमोक्ेषे च ि्मे च दीक्षायां मिसािने ॥१०६॥

कालहवज्ञानसूते्रे तु चतुष्पादगृिागमे ।
कालव्याहििचहकत्सायां स्वाहमसंबोिने तथा ॥ १०७॥

गिाश्वारोिणे ि्न्दन्वगािश्वानां च बंिने ।

परोपकरणेचैव हनीनां थथापने तथा ॥ १०८॥

गीतवाद्याहदनृत्यादौ नृत्यिास्त्रहवचारणे।
पुरग्रामहनवेि च हतलकक्षेत्रिारणे ॥ १०९ ॥

आहतथोकहविादिु ज्वररतेमूहछथतेऽहप वा।
स्विनस्वाहमसम्बिै अन्नादेदाथरुसंग्रिे ॥ ११० ॥

स्त्रीणां दन्ताहदभूियां वृिरागमने तथा ।
गुरुपूिाहविादीनां चालने च वरानने ।।१११ ।।

डाियां हसन्दिदं प्रोिे योगाभ्यासाहद कमथ च।
तत्राहप विथयेिायुं ते आकािमेव च ॥११२॥

सवथकायाथहण हसद्ध्यन्दन्त हदवाराहत्रगतान्यहप ।
सविुे िुभकायेिु चन्द्रचारुः प्रिस्यते ॥११३॥

कहठनकूरूरहवद्यानां पठने पाठने तथा।
स्त्रीसंगवेश्यागमने मिानौकाहिरोिणे ॥११४॥

भ्रिकाये सुरापाने वीरमंत्राद्युपासने ।
हवह्वलोिंसदािदौ हविदानेचवैररणाम् ॥११५ ॥

िास्त्राभ्यासे च गमने मृगयापिुहवक्रये ।
इहिकाकाष्ठपािाणरत्नर्थणदारणे ॥ ११६ ॥

गत्यभ्यासे यंत्रतंत्रे दुगथपवथतरोिणे ।
द्यूते चौये गिाश्वाहदरथसािनिाने ॥११७॥

व्यायामे मारणोच्चाटे िट्कमाथहदकसािने ।
यहक्षणीयक्षवेतालहविभूताहदहनग्रिे ॥ ११८ ॥

खरोिरमहििादीनां गिाश्वारोिणे तथा।
नदीििलौितरणे िीिे हलहपलेखने ॥ ११९ ॥

मारणे मोिने स्तंभे हिवेिोच्चाटने विे।
प्रेरणे किथणे क्षोभे दाने च क्रयहवक्रये ॥१२०॥

प्रेताकिथणहिवेितुरुहनग्रिणेऽहप च।
खिगिस्ते वैररयुिे भोगे वा रािदिथने।
भोज्ये स्नाने व्यविारे दीप्तकाये रहवः िुभः ॥१२१ ॥

भिुमागेण मन्दिाौ स्त्रीणां वश्याहदकमथहण ।

यिनं सूयथविोन कतथव्यं सवथदा बिुैः ॥१२२॥

कूरूराहण सवथकमाथहण चराहण हवहविाहन च।
ताहनहसद्धयन्दन्त सूयेणात्रकायाथहवचारणा ॥१२३ ॥

अथ सुषुम्ना

क्षणं वामे क्षणं दक्षे यदा विहत मारुतुः ।
सुिम्ना सा च हवज्ञेया सवथकायथिरा सूमृता ॥१२४॥

तस्यां नाड्यां न्दथथतो वहह्नर्ध्थलते कालरूपकुः।
हविवत्तं हविानीयात्सवथकायथहवनािकम् ॥१२५ ॥

दयाऽनुक्रममुल्लङ्घय यस्य िनिीयं वित् ।
तदा तस्य हविानीयादिुभं नात्र संियुः ॥ १२६ ॥

क्षणं वामे क्षणं दक्षे हविमं भावमाहदिेत् ।
हवपरीतं फलं ज्ञेयं ज्ञातव्यं च वरानने ॥ १२७॥

उभयोरेव संचारं हविवत्तं हवदुबुथिाुः ।
न कुयाथतकूरूर-सौम्याहन तत्सवां हवफलं भवेत् ॥१२८॥

िीहवते मरणे प्रश्ने लाभालाभे ियािये।
हविमे हवपरीते च संस्मरेज्जगदीश्वरम् ॥१२९ ॥

ईश्वरे हचन्दन्तते कायां योगाभ्यासाहद कमथ च।
अन्यत्तत्र न कतथव्यं ियलाभसुखैहिहभुः ॥१३० ॥

सूयेण विमानायां सुिम्नायां मुहुमुथहुुः ।
िापं दद्यािरं दद्यात्सवथैव तदन्यथा ॥ १३१ ॥

निीसंक्रमणे काले तत्त्वसंगमनेऽहप च।
िुभं हंकंहचन्न कत्तथव्यं पुण्यदानाहद हंकंचन ॥१३२॥

हविमस्योदयो यत्र मनसाऽहप न हचन्तयेत् ।
यात्रा िहनकरी तस्य मृत्युुः क्लेिो न संियुः ॥१३३ ॥

पुरो वामोर्ध्थतश्चन्द्रो दक्षिाुः पृष्ठतो रहवुः ।
पूणाथररहववेकोऽयं ज्ञातव्यो देहहिुः सदा ।।१३४।।

ऊर्ध्थवामाग्रतो दूतो ज्ञेयो वामपथे न्दथथतुः ।
पृष्ठे दक्षे तथाऽस्तातूसूयथवािागतुः िुभुः ॥१३५ ॥

अनाहदहवथिमुः संहिहनथरिाारो हनराकुलुः ।
परे सूक्ष्मे हवलीयेत सा सन्ध्या सन्दद्भरुच्यते ॥ १३६ ॥

न वेदं वेद इत्याहुवेदो वेदो न हवद्यते ।
परिाा वेद्यते येन स वेदो वेद उच्यते ॥१३७॥

स सन्ध्यां सन्दिररत्याहुः सन्ध्या सन्दिहनथगद्यते ।
हविमुः सन्दिगुः प्राणुः स संहिुः संहिरुच्यते ॥१३८॥

श्रीदेवुयुवाच

देवदेव मिादेव सवथसंसारतारक ।
न्दथथतंत्वदीयहृदये रिस्यं वद मे प्रभो ॥१३९ ।।

ईश्वर उवाच

स्वरज्ञानरिस्यात्तत् न काहचचे्चिदेवता ।
स्वरज्ञानरतो योगी स योगी परमो मतुः ॥१४०।।

पञ्चतत्त्वाद्भवेत्सृहिथत्तते्त्वे ततं्त्वं प्रलीयते ।
पञ्चततं्त्वं परं ततं्त्वं तत्त्वातीतं हनरञ्जनम् ॥ १४१ ॥

तत्त्वानां नाम हवजे्ञेयं हसन्दियोगेन योहगहभुः ।
भूतानां तुिहचह्नाहन ानातिी स्वरोत्तमुः ॥१४२ ॥

पृहथव्यापस्तथा तिेो वायुराकािमेव च।
पञ्चभूतािकं हवश्वं यो ानाहत स पूहितुः ॥१४३ ।।

सवथलोकथथिीवानां न दिेो हभन्नतत्त्वकुः ।
भूलोकात्सत्यपयथन्तं नाड़ीभेदुः पृथक्पृथक् ॥१४४॥

वामे वा दहक्षणे वाऽहप उदयाुः पञ्च कीहतथताुः ।
अिो तत्त्वहवज्ञानं शृणु वक्ष्याहम सुन्दरर ॥१४५ ॥

प्रथमे तत्त्वसंख्यानं हितीये श्वाससंयिुः ।
तृतीये स्वरहचह्नाहन चतुथे थथानमेव च ॥१४६॥

पञ्चमे तस्य वणाथश्च षेठे तु प्राण एव च।
सप्तमे स्वादसंयुिा अिमे गहतलक्षणम् ॥१४७॥

एवमिहविं प्राणं हवुिवनं्तं चराचरम् ।
स्वरात्परतरं देहव नान्यथा त्वमुबिेक्षणे ॥१४८ ॥

हनरीहक्षतव्यं यत्नेन सदा प्रतूयि कालतुः ।
कालस्य वञ्चनाथाथय कमथ कुवथन्दन्त योहगनुः ॥१४९ ॥

शुरुत्योरंगुष्ठकी मध्यांगुल्यौ नासापुटिये।
वदनप्रान्तके चान्यांगुलीदथद्याच्च नेत्रयोः ॥१५० ॥

अस्यान्तसुतु पृहथव्याहदतत्त्व ज्ञानं भवेत्क्रमात् ।
पीतश्वेतारुणश्यामैहबथन्दुहभहनथरुपाहिकम् ॥१५१ ॥

दपथणेन समालोक् तत्र श्वास हवहनुः हक्षपेत् ।
आकारैसुतु हवज्ञानीयात्तत्त्व भेदं हवचक्षणुः ॥१५२ ॥
चतुरस्रं चिाथचनंद्रं हत्रकोणं वतुथलम् सूमृतम् ।
हबिुहभसुतु नभो ज्ञेयमाकारैस्तत्त्वलक्षणम् ॥१५३॥

मध्ये पृथ्वी ह्यथश्चापश्चोर्ध्वं विहत चानलुः ।
हतयथग्वायुप्रविाश्च नभो विहत संक्रमे ॥१५४॥

आपुः श्वेताुः हक्षहतुः पीता रिवणो हुतिानुः ।
मारुतो नीलिीमूत आकिाुः सवथवणथकुः ॥१५५ ॥

अथ स्थानपरत्व से तत्त्वज्ञान

ांस्किये न्दथथतो वहह्ननाथहभमूले प्रभञ्जनुः ।
ानुिदे हक्षहतस्तोयं पादान्ते मस्तके नभुः ।।१५६ ।।

अथ स्वाद से तत्त्वज्ञानप्रकार

मिोयं मिुरं स्वादे कािायं िलमेव च।
तीक्ष्णं तिेुः समीरोऽम्ल आकिां कटुकं तथा ॥ १५७॥

अथ गडत से तत्त्वज्ञान

ओंगुलं ाविायुरहनलश्चतुरंगुलम् ।
ाादिांगुलं मिोयं वारुणं ाािोांगुलम् ॥१५८ ॥

ऊर्ध्वं मृतुयुरिः ान्दन्तन्दस्तयथगुच्चाटनं तथा ।
मध्ये स्तम्भं हविानीयान्नभुः सवथत्र मध्यमम् ॥१५९॥

पृहथव्यां न्दथथरकमाथहण चरकमाथहण वारुणे ।
तिेहस कूरूरकमाथहण मारणोच्चाटने ऽहनले ॥ १६० ॥

व्योहम्न हंकंहचन्न कव्यथमभ्यसेद्योगसेवनम् ।

ून्यिता सवथकायिु नात्र कायाथ हवचारणा ॥१६१ ॥

पृहथवीलाभ्यां हसन्दिुःस्यानृ्मतुयुवथह्नौ क्षयोऽहनले ।
नभसो हनष्फलं सवे ज्ञातव्ं यं तत्त्ववाहदहभुः ।।१६२ ।।

हचरलाभुः हक्षतेज्ेञेयस्तत्क्षणे तोयतत्त्वतुः ।
ाहिनुःस्याहह्नवाताभ्यां नभसोहनष्फलं भवेत् ॥१६३ ॥

पीतुः िनैमथध्यवाी िनुयाथवद्ग्गुरुर्ध्हनुः ।
कवोषु्ः पाहथथवो वायुःन्दथथरकायथप्रसािकुः ॥१६४॥

ाौवाी गुरुर्धानुः ाीघ्रगुः ाीतलुः न्दथथतुः ।
यत्ािाांगुलो वायुः स आपुः ाुभकमथकृत् ॥१६५॥

आवतथगश्चात्युषाश्च ाोणाभश्चतुरंगुलुः ।
ऊर्ध्वे वाी च युः कूरूरकमथकारी स तैसुः ॥१६६॥
उषु्ः ाीतुः कृष्वणथन्दथथयथगाभ्यिकांगुलुः ।
वायुः पवनसंज्ञसुतु चरकमथप्रसािकुः ॥१६७॥

युः समीरुः समरसुः सवथतत्त्वगुणाविुः ।
अम्बरं तं हवाानीयाद्योहगनां योगदायकम् ॥१६८ ॥

पीतवणां चतुष्कोणं मिुरं मध्यमाहश्रतम् ।
भोगदं पाहथथवं तत्ं्वं प्रवाो ादिांगुलम् ॥१६९॥

श्ेवेतमैन्दुसंकाां स्वादुकाायमाथकम् ।
लाभकािरुणं तत्ं्वं प्रवाो ाोांगुलम् ॥१७० ॥

रिं त्रकोणं तीक्ष्णं च ऊर्ध्थभागप्रवाकम् ।
दीप्तं च तैसं तत्ं्वं प्रवाो चतुरंगुलम् ॥१७१ ॥

नीलं च वतुथलाकारं स्वाम्ल हतयथगाहश्रतम् ।
चपलं मारुतं तत्ं्वं प्रवाोांगुलं सृ्मतम् ॥१७२॥

वणाथकारे स्वादुवाो अव्यि सवथगाहमनाम् ।
मोक्षदं नाभसं तत्ं्वं सवथकायिु हनष्फलम् ॥१७३ ॥

पृथ्वी ाले ाुभे तते्वे तैाौ हमश्रफलोदयम् ।
ाहिनमृतुयुकरौ पुंसामिुभो व्योममारुतौ ।।१७४ ।।

आपूवथपहश्चमे पृथ्वी तैश्च दहक्षणो तथा।
वायुश्चोत्तरहदग्ज्ज्ेञेयो मध्ेये कोणगतं नभुः ॥१७५ ॥

चने्द्रे पृथ्वीले स्यातां सूयेऽहिवाथ यदा भवेत् ।
तदा हसन्दिनथ सने्दिुः सौम्या सौमे्यिु कमथसु ॥ १७६ ॥

लाभुः पृथ्वीकृतोहह्नुः स्याहन्निायां लाभकृञ्जलम् ।
वह्नौ मृतुयुःक्षयो वायुनथनभथथानंदित्क्वहचत् ॥१७७॥

ाहिवतवे्ये ाये लाभे कृष्यां च ानकमथहण ।
मिाथे यिुप्रशे्ने च गमनागमने तथा ।।१७८ ॥

आयाहत वारुणे तते्त्वे ातुरुरन्दस्त ािुभुः हक्षतौ ।
प्रयाहत वायुतोऽन्यत्र ााहनमृतुयु नभोऽनले ॥१७९ ॥

पृहथव्यां मूलहचन्ता स्याज्जीवस्य ालवातयोुः ।
तिैसा ाातुहचंतास्याचूछून्यमाकिातो वदेत् ॥१८०॥

पृहथव्यां बहुपादुाः सुयुहिथपदस्तोयवायुतुः ।
तिैसे्येव चतुष्पादो नभसा पादवहिथतुः ॥१८१ ॥

किुो वहह्नुः रहवुः पृथ्वी सौरररापुः प्रकीहतथतुः ।
वायुथथानन्दथथतो राहुदथक्षरन्ध्रविाकुः ॥१८२॥

लिं चन्द्रो बिुः पृथ्वी गुरुवाथतुः हसतोऽनलुः ।
वामनाड्यां न्दथथतुाः सवे सवथकायिु हनहश्चतुाः ॥१८३॥

पृथ्वी बिुो ालाहदन्दुः ािुक्रो वहह्नुः रहवुः किुः ।
वायु राहिुनी व्योम गुरुरेवं प्रकीहतथतुः ॥९८४॥

प्रवासप्रश्न आहदते्ये यहद राहुगथतोऽहनले ।
तदासौ चहलतो जे्जेयुः थथानान्तरमपेक्षते ॥१८५ ॥

आयाहत वारुणे तते्त्वे ततै्रैवान्दस्त ािुभुः हक्षतौ ।
प्रवासी पवनेऽन्यत्र मृतुयुरेवानले भवेत् ॥१८६॥

पाहथथवे मूलहवज्ञानं ािुभं कायां ाले तथा।
ििौये ाातुहवज्ञानं व्योहम्न ाून्यं हवहनहदथित् ॥१८७॥

तुहिुः पिुी रहतुः क्रिाा ाियिी ारिाले ।
तिौ वाय्वोश्च सुप्ताक्षो ज्वरकम्पुः प्रवाहसनुः ॥१८८ ॥

गतायुमृतुयुराकिाो तत्त्वथथाने प्रकीहतथताुः ।
ाििैताुः प्रयते्नेन ज्ञातव्या देहिकैुः सदा ॥१८९॥

पूवाथयां पहश्चमे याम्ये उत्तरस्यां यथाक्रमम् ।
पृहथव्यादीहन भूताहन बहलष्ठाहन हवहनहदथेत् ॥१९० ॥

पृहथव्यापस्तथा तेिो वायुराकािमेव च।
पञ्चभूतिाको देिो ज्ञातव्यश्च वरानने ।।१९१ ॥

अन्दस्त मांसं त्वचा नािी रोमं चैव तु पञ्चमम् ।
पृथ्वी पञ्चगुणा प्रोिा ब्रह्मज्ञानेन भाहितम् ॥१९२॥

शुक्रिोहणतमज्जा च मूत्रं लाला च पञ्चमम् ।
आपुः पञ्चगुणाुः प्रोिा ब्रह्मज्ञानेन भाहितम् ॥१९३ ॥

कुषुिा तृिा तथा हनिा कान्दन्तरालस्यमेव च।
तेिुः पञ्चगुणं प्रोिं ब्रह्मज्ञानेन भाहितम् ॥१९४॥

धावनं चलनं ग्रन्थुः संकोचनप्रसारणे ।
वायोुः पञ्चगुणाुः प्रोिा ब्रह्मज्ञानेन भाहितम् ॥१९५॥

रागिेिौ तथा लज्जा भयं मोिश्च पञ्चमुः ।
नभुः पञ्चगुणं प्रोिं ब्रह्मज्ञानेन भाहितम् ॥१९६ ॥

पृहथव्याुः पलाहन पञ्चािच्चत्वाररंित्तथाम्भसुः ।
अिन्दस्त्रिंित्पुनवाथयोहवांहितनथभसो दि ॥१९७॥

पृहथव्यां हचरकालेन लाभश्चापुः क्षणाद्भवेत् ।
जायते पवने स्वल्पुः हसिोऽप्यिौ हवनश्यहत ॥१९८॥

पृहथव्याुः पञ्च ह्यपां वेदा गुणास्तेिो हिवायुतुः ।
नभसस्येकगुणश्चैव तत्त्वज्ञानहमदं भवेत् ॥१९९॥

फूत्कारकृत्प्रसुफुहटता हवदीणाथ पहतता धरा।
ददाहत सवथकायेिु अवथथासदृिं फलम् ॥२००॥

हिनष्ठा रोहिणी ज्येष्ठाऽनुरािा श्रवणं तथा।
अहभहिदुत्तरािाढापृथ्वीतत्त्वमुदाहृतम् ॥२०१ ॥

पूवाथिाढा तथाऽश्लेिा मूलाद्रिा च रेवती।
उत्तराभािपदा तोयतत्त्वं िहतहभक् हप्रये ॥ २०२ ॥

भरणी कृहत्तका पुष्यो मघा पूवाथ च फाल्गुनी।
पूवाथभािपदा स्वाती तेिस्तत्त्वहमहत हप्रये ॥ २०३॥

हविाखोत्तरफाल्गुन्यौ िस्तहचत्रे पुनवथसुः ।

अहश्वनीमृगिंगी च वायुतत्त्वमुदाहृतम् ॥२०४॥

विन्नीीन्दथथतो दूतो यतूपृच्छहत ि ुभिाुभम् ।
तत्सवां हसन्दिमाप्नोहत िूने्ये िूनं्यं न संयुिः ॥२०५॥

पूणोऽहप हनगथमश्वासे सुतते्त्वेऽहप न हसन्दिदुः ।
सूयथश्चन्द्रोऽथवा नृणां संग्रे सवथहसन्दिदुः ॥२०६॥

तते्त्वे रामो ियं प्राप्तुः सुतते्त्वे च िनंयुिः ।
कौरवा हनिताुः सवे युिे तत्त्वहवपयथयात् ॥२०७॥

न्मान्तरीयसंस्कारात्प्रसादादथवा गुरोुः ।
केिांहचज्जायते तत्त्ववासना हवमलािनाम् ॥ २०८ ॥

लंबीि िरणीं ध्यायेच्चतुरस्रां सुपीतभाम् ।
सुगिां स्वणथवणाथभां प्रापु्नुयाद्देदिलार्वम् ॥२०९॥

वंबीिं वारणं ध्यायेत्तत्त्वमिथिहिप्रभम् ।
कुषुतूतृषाहदसहिषु्णत्वं िलमध्ये च मज्जनम् ॥२१०॥

रंबीमर्हिं ध्यायेन्दत्किोणमरुणप्रभम् ।
बह्वन्नपानभिोिृत्वमातपाहिसहिषु्णता ॥२११ ॥

यंबीिं पावनं ध्यायेितुथलं श्यामलप्रभम् ।
आकािगमनाद्यं च पहक्षवद्गमनं तथा ॥ २१२ ॥

िबीिं गगनं ध्यायेहन्नराकारं बहुप्रभम् ।
ज्ञानं हत्रकालवीियमैश्वयथमहणमाहदकम् ॥२१३॥

स्वरज्ञानी नरो यत्र िनं नान्दस्त ततुः परम् ।
गम्यते स्वरज्ञानेन ह्यनायासं फलं भवेत् ॥२१४॥

श्रीदेव्युवाच
देवदेव मिादेव मिाज्ञानं स्वरोदयम् ।
हत्रकालहवियं चैव कथं भवहत िंकर ॥२१५ ॥

श्रीिडव उवाच

अथथकालियप्रश्न ि ुभिाुभहमहत हत्रदा ।
एतहत्रकालहवज्ञानं नान्यद्भवहत सुन्दरर ।।२१६ ।।

तते्त्वे ि ुभिाुभं कायां तते्त्वे ियपरािियौ।
तते्त्वे सुहभक्षदुहभथक्षे तत्त्वं हत्रपादमुच्यते ॥२१७॥

श्रीदेवुयुवाच

देवदेव मिादेव सवथसंसारसागरे।
हंकंनराणां परं हमत्रं सवथकायाथथसािकम् ॥२१८॥

ईश्वर उवाच

प्राण एव परं हमत्रं प्राण एव परुः सखा।
प्राणतुल्युः परो बिुनाथन्दस्त नान्दस्त वरानने ।।२१९ ॥

श्रीदेवुयुवाच

कथं प्राणन्दथथतो वायुदुिः हंकं प्राणरूपकुः ।
तते्त्वैु संचरन्प्राणो ज्ञायते योहगहभुःकथम् ॥२२० ॥

श्रीडिव उवाच

कायानगरमध्यथथो मारुतो रक्षपालकुः ।
प्रविे दिहभुः प्रोिो हनगथमे ािदिंगुलुः ॥२२१ ॥

गमने तु चतुहवांन्दिनेत्रवेदासुतु ािवने।
मैथुने पञ्चिहिश्च ियने च ितांगुलम् ॥ २२२॥

प्राणस्य तु गहतदेहव स्वभाविााददिंगुला।
भोिने वमने चैव गहतरािददिंगुला ॥२२३ ॥

एकांगुले कृते नूयूने प्राणे हनष्कामता मता ।
आनन्दसुतु हितीये स्यात्कहविन्दिसूतृतीयके ॥२२४॥

वाचाहसन्दिश्चतुथे च दूरदृहिसुतु पञ्चमे ।
षि्ठे त्वाकािगमनं चंविेगश्च सप्तमे ॥ २२५॥

अिमे हसियश्ैचैव नवमे हनियो नव।
दिमे दिमूहतथश्च छाया नैकादिे भवेत् ॥२२६॥

ािदिे िसचारश्च गङ्गामृतरसं हपबेत्।
आनखाग्रं प्राणपूते कस्य भक्ष्यं च भोिनम् ॥२२७॥
एवं प्राणहवहिः प्रोिुः सवथकायथफलप्रदुः ।
ायिते गुरुवाक्येन न हवद्यािास्त्रकोहटहभुः ॥२२८॥

प्रातश्ंचिरी रहवुः सायं यहद दैवान्न लभ्यते।
मध्याह्नान्मध्यरात्रश्च परतसुतु प्रवतथते ॥ २२९ ॥

दुरयुि ियी चन्द्रः समासन्ने हदवाकरुः ।
विन्नाड्यागतुः पादुः सवथहसन्दिप्रदायकुः ॥२३०॥

यात्रारम्भे हववाो च प्रवाे नगराहदके।
ुभिकायाथहण हसद्ध्यन्दन्त चंर्ाािाु सवथदा ॥२३१॥

अयनहतहथहदनैुः स्वीयतत्त्वे च युि
यहद विहत कदाहचदैवयोगेन पुंसाम् ।
स ियहत ररपुसैन्यं स्तम्भमात्रस्वरेण
प्रभवहत न च हवघ्नं किवस्याहप लोके ॥ २३२ ॥

रक्ष ािवं रक्ष ािवं ािवांगे परररााय च।
ािवाो ािपहत यो युि ािवञ्जयहत मेहदनीम् ॥२३३॥

भूमौ ाले च कतथव्यं गमनं ािन्दन्तकमथसु।
वह्नौ वायौ प्रदीप्तेुि खे पुननोभयेष्वहप ॥२३४॥

ािवेन ािस्त्रं बध्नायाज्जीवेनैव हवकासयेत् ।
ािवेन प्रहक्षपेच्छस्त्रं युियहत सवथदा ॥२३५॥

आकृष्य प्राणपवनं समाररोहेत वाािनम् ।
समुत्तरे पदं दद्यात्सवथकायाथहण साियेत् ॥२३६ ॥

आपूणथ ातुरुसामग्रीं ंपूणथ वा स्वबलं तथा ।
कुरुते पूणथतत्त्वथथो ियत्येको वसुंिराम् ॥२३७ ॥

या नााी वाते चाने तस्यामेवाहिदेवता ।
समुभुखेऽपहदाा ताां सवथकायथफलप्रदा ॥२३८ ॥

आदौ तु हक्रयते मुाा पश्चाद्युिं समाचरेत् ।
सपथमुदा कृता येन तस्य हसन्दिनथ संयुिः ॥२३९ ॥

भटाः समायान्दन्त च योद्धुकामाुः
चन्द्रप्रवाोऽप्यथ सूयथवााो।
समीरणस्तत्त्वहवदां प्रतीतो
या ािून्यता सा प्रहतकायथनााम् ॥२४० ॥

यां हदाां वाते वायुयुथिं तहद्दहि दापयेत् ।
ियत्येव न संदेहुः ािक्रोऽहप यहद चाग्रतुः ॥२४१॥

यत्र नाड्यां ािवायुस्तदंगे प्राणमेव च।

आकृष्य गचे्छेत्कणाथन्तं प्राणमेव पुरन्दरम् ॥२४२॥
प्रहतपक्षप्रिारेभ्युः पूणाथङ्गं योऽहभरक्षहत ।
न तस्य ररपुहभुः ि्न्दिबथहलषै्ठैरहप ि्न्यते ॥ २४३ ॥

अंगुष्ठतिथनीर्वा पादांगुषे्ठे तथा ध्र्नुः ।
युिकाले च कतथव्यो लक्षयोधदुियो भवेत् ॥२४४॥

हनिाकरो रवौ चारे मधे्ये यस्य समीरणुः ।
न्दथथतो रके्षेहद्दगन्ताहन ियकांक्षीगतुः सदा ॥ २४५ ॥

श्वासप्रविेकाले तु दूतो ि्ल्पहत वांहछतम् ।
तस्याथथुः हसन्दिमायाहत हनगथमे नैव सुन्दरर ॥ २४६ ॥

लाभादीन्यहप कायाथहण पृिाहन कीहतथताहन च।
िीवे हवंहित हसद्ध्यंहत िाहनथहनुःसरणे भवेत् ॥२४७॥

नरे दक्षा स्वकीया च न्दस्त्रयां वामा प्रिस्यते।
कुम्भको युिकाले च हतस्रो नाड्यस्त्रयीगहतुः ॥२४८ ॥

किारस्य सकारस्य हवना भेदं स्वरुः कथम् ।
सोऽिं िंसपदेनैव िीवो ियहत सवथदा ॥ २४९ ॥

िून्यांग पूरीतं कृत्वा िीवांगे गोपयेज्जयम् ।
िीवांगे र्ातमाप्नोहत िून्यांगं रक्षते सदा ॥ २५० ॥
वामे वा यहद वा दके्षे यहद पृच्छहत पृच्छकुः ।
पूणे र्ातो न िायेत िून्ये्ये र्ातं हवहनहदथिेत् ॥२५१ ॥

भूतते्त्वेनोदरे र्ातुः पदथथानेऽम्बुना भवेत् ।
ऊरुथथानेऽहिततेत्त्वेन करथथाने च वायुना ॥ २५२ ॥

हिरहस व्योमततेत्त्वे च ज्ञातव्यो र्ातहनणथयुः ।
एवं पञ्चहविो र्ातुः स्विरास्ते्त्रे प्रकाहितुः ॥ २५३॥

युिकाले यदा चन्द्रुः थथायी ियहत हनहश्चतम् ।
यदा सूयथप्रवािसु्तु यायी हवियते तदा ॥२५४॥

ियमधे्ये तु संदेिे नािीमध्यं तु लक्षयेत् ।
सुिुम्नायां गते प्राणे समरे ितु्रुसंकटुः ॥२५५ ॥

यस्या नाड्याुः भवेच्चारस्तां हदिं युहि संश्रयेत् ।
तदाऽसौ ियमाप्नोहत नात्र कायाथ हवचारणा ॥ २५६॥

यहद संग्रामकाले तु वामनािी सदा विेत् ।

थथाहयनो हवियं हवद्याहिपुवश्यादयोऽहप च ॥ २५७॥

यहद संग्रामकाले तु सूयथसुतु व्यावृतो वित् ।
तदा याहयियं हवद्यात्सदेवासुरमानवे ॥ २५८ ॥

रणे िरहत ितुरुसं्तं वामायां प्रहविेन्नरुः ।
थथानं हविुवचारेण ियुः सूयेण िावता ॥२५९॥

 िियुिये कृते प्रश्ेने पूणथस्य प्रथमे ियुः ।
ररिे चैव हितीयसुतु ियी भवहत नान्यथा ॥ २६० ॥

पूणथनिाीगतुः पृष्ेठे िून्यांगं च तदाग्रतुः ।
िून्यिथथाने कृतुः ितुरुहभथयते नात्र संयिुः ।।२६१ ।।

वामचारे समं नाम यस्य तस्य ियो भवेत् ।
पृच्छको दहक्षणे भागे हवियी हविमाक्षरुः ।।२६२ ।।

यदा पृच्छहत चन्द्रस्य तदा सिानमाहदित् ।
पृचे्छेद्यदा तु सूयथस्य तदा िानीहि हवग्रिम् ।।२६३ ।।

पाहथथवे च समं यिुहसन्दिभथवहत वारुणे ।
यिुे हि तिैसो भंगो मृतुयुवाथयौ नभस्यहप ।। २६४ ।।

हनहमत्तकपमादिाा यदा न ज्ञायतेऽहनलुः ।
पृच्छाकाले तदा कुयाथहददं यते्नेन बुन्दिमान् ।।२६५ ।।

हनश्चलां िारणां कृत्वा पुष्पं िस्ताहन्नपातयेत् ।
पूणाथङे्गे पुष्पपतनं िून्ंयं वा तत्परं भवेत् ।।२६६ ।।

हतष्ठानुपहविंश्चाहप प्राणमाकिथयहन्निम् ।
मनोभंगमकुवाथणुः सवथकायिुे िीवहत ।।२६७ ।।

ना कालो हवहविं िोरं न िस्ंत्रं न च पन्नगुः ।
न ितुरुव्याहिचोराद्याुः िून्यथथानाहितुं क्षमाुः ।।२६८ ।।

िीवेन थथापयियोयुं िीवेनारम्भयेतुपुनुः ।
िीवेन क्रिीते हनतं्यं द्यूते ियहत सवथा ।।२६९ ।।

स्वरज्ञानबलादग्रे हनष्फलं कोहटिा भवेत् ।
इिलोके परत्राहप स्वरज्ञानी बली सदा ।।२७० ।।

दि ितायुतं लकं्षं देिाहिपबलं क्वहचत् ।
तिक्रतुसुरेन्द्राणां बलं कोहटगुणं भवेत् ।।२७१ ।।

देवुयुवाच

परस्परं मनुष्याणां यिेु प्रिोो ियस्त्वया।
यमयिेु समुत्पन्ेने मनुष्याणां कथं ियुः ।।२७२ ।।

ईश्वर उवाच

ध्यायेद्ेदेवं न्दथथरो िीवं ििुहुयाज्जीवसंगमे ।
इहिसन्दिभथवेत्तस्य मिालाभो ियस्तथा ॥ २७३ ॥
हनराकारात्समुत्पन्ंनं साकारं सबलं िगत् ।
तत्साकार हनराकार ज्ञाने भवहत तत्क्षणात् ॥ २७४॥

श्रीदेवुयुवाच

नरयिुं यमयिुं त्वया प्रिों मिेश्वर।
इदानीं ंदेवदेवानां वीकरणकं वद ॥ २७५ ॥

ईश्वर उवाच

चन्द्र सूयेण चाकृष्य थथापयेज्जीवमण्डले ।
ओिन्मविगा रामा कहथतोऽयं तपिोनैुः ॥ २७६ ॥

ीविेन गृह्यते िीवो िीवो िीवस्य दीयते।
ीविथथाने गतो िीवो बालिािीवान्तकारकुः ॥ २७७ ॥

रात्र्यन्तयामवेलायां प्रसुप्ेते काहमनिीने ।
ब्हिर्ीवं हपबेद्यसुतु बालाप्राणिरो नरुः ॥ २७८ ॥

ओिक्षरं िहपत्वा तु तन्दस्मन्काले गते सहत।
तत्क्षणं दीयते चन्द्रो मिोमायाहत काहमनी ॥ २७९ ॥

यिने वा प्रसंगे वा युवत्याहलङ्गनेऽहप वा।
युः सूयेण हपबेश्चन्द्रं स भवेन्मकरर्धिुः॥२८० ॥

हिव आहलङ्गयते िक्त्या प्रसंगे दहक्षणेऽहप वा।
तत्क्षणाद्दापयेद्यसुतु मिोयेत्काहमनिीतम् ॥२८१ ॥

नव सप्त त्रयुः पञ्च वारान्ंसंगसुतु सूयथभे।
चन्ेद्रे हितुयथिट्कृत्वा वश्या भवहत काहमनी ॥२८२॥

सूयथचन्द्रौ समाकृष्य सपाथक्रान्त्याऽरिोषट्योुः ।
मिापद्ेये मुखं सूपृषवा वारंवारहमदं चरेत् ॥२८३॥

आप्राणहमहत पद्मश्च यावहन्निविं गता ।
पश्चाज्जाग्रहतवेलायां चोषे्येते गलचकुषुि ॥२८४॥

अनेन हवहिना कामी वियेत्सवथकाहमनीुः
इदं न वाच्यमन्यन्दस्महन्नत्याज्ञा पारमेश्वरी ॥२८५ ॥

अथ गभयकरणम्

ऋतुकालभवा नारी पञ्चमेऽह्न यदा भवेत् ।
सूयथचन्द्रमसोयोगे सेवनातुपुत्रसंभवुः ॥२८६ ॥

ङ्खिवल्लीं ंगवां दुगे्धे पृथ्थ्याप्यो विते यदा ।
भतुथरेवं वदिाक् दिां देहि हत्रहभवथचुः ॥२८७ ॥

ऋतुस्नाता हपबेन्नारी ऋतुदानं तु यिोयेत् ।
रूपलावण्यसंपन्नो नरहसंुि प्रसूयते ॥ २८८ ॥

सिुम्नासूयथविोन ऋतुदानं तु यिोयेत् ।
अंगिीनुः पुमान्यसुतु ियतेऽत्र कुहवग्रिुः ॥२८९ ॥

हविमांके हदवारात्रौ विीमांके हदनाहिपुः।
चन्द्रनेत्राहितते्त्विु वन्ध्या पुत्रमवापुनुयात् ॥२९० ॥

ऋत्वारमे्भे रहवुः पुंसां स्त्रीणां चैव सिुाकरुः ।
उभयोुः संगमे प्रापे्ते वन्ध्या पुत्रमवापुनुयात् ॥ २९१ ॥

ऋत्वारमे्भे रहवुः पुंसां िुक्राने्ते च सिुाकरुः।
अनेन क्रमयोगेन नादते्ते दैवदारुकम् ॥२९२॥

चन्द्रनिाी यदा प्रशे्ने गभे कन्या तदा भवेत् ।
सूयो भवेत्तदा पुत्रो ियोगथभो हविन्यते ॥ २९३ ॥

पृथ्वी पुत्री िले पुत्रुः कन्यका तु प्रभञ्जने ।
तिेहस गभथपातुः स्वान्नभस्यहप नपुंसकुः ॥२९४॥

चनं्द्रं स्त्री पुरिुः सूये मधे्ये मागे नपुंसकुः ।
गभथप्रशे्ने यदा दूतुः पूणथ पुत्रुः प्रिायते ॥ २९५॥

तूनि्ये िूनं्यं युगे युगं्मं गभथपातश्च संक्रमे।
तत्त्वहवत्स हविानीयात्कहथतं ततुतु सुंदरर ॥ २९६ ॥

गभाथदानं मारुते स्याच्च दुःखी
हदकुषु ख्यातो वारुणे सौख्ययुिः ।
गभथस्रावुः स्वल्पिीवश्च वह्नौ
भोगी भव्युः पाहथथवेनाथथयुिः ॥२९७॥

हनवान्सौख्ययुिश्च भोगवानथथसंन्दथथहतुः ।
स्याहन्नतं्यं वारुणे तते्त्वे व्योहम्न गभो हवनश्यहत ॥ २९८ ॥

हमोने्द्र सुसुतोत्पहत्तवाथरुणे दुहिता भवेत् ।
हिसु गभथिाहनुःस्याज्जातमात्रस्य वा मृहतुः ॥२९९ ॥

रहवमध्यगतश्चन्द्रश्चन्द्रमध्यगतो रहवुः ।
ज्ञातवं्यं गुरुतुः ीघं्रं न वेदािास्त्रकोहटहभुः ॥३०० ॥

अथ संवत्सरफलम्

चैत्रिुक्लप्रहतपहद प्रातस्तत्त्वहवभेदतुः ।
पश्येहिचक्षणो योगी दहक्षणे चोत्तरायणे ॥ ३०१॥

चन्द्रोदयस्य वेलायां हिमानोऽत्र तत्त्वतुः ।
पृहथव्यापस्तथा वायुः सुहभकं्षं सवथसस्यिम् ॥ ३०२॥
तेिोव्योम्नोभथयं रोरं दुहभथकं्षं कालतत्त्वतुः ।
एवं तत्त्वफलं ज्ञेयं विे मासे हदनेष्वहप ॥ ३०३ ॥

मध्यमा भवहत कू्ररा दुिा सिेषु कमथसु।
देिभंगमहारोगके्लेिकिाहददुःखदा ॥ ३०४ ॥

मेषसंक्रान्दन्तवेलायां स्वरभेदं हवचारयेत् ।
संवत्सरफलं ब्रूयाल्लोकानां तत्त्वहचन्तकुः ॥३०५॥

पृहथव्याहदकतते्त्वेन हदनमासाब्दिं फलम् ।
िोभनं च यथा दुिं व्योममारुतवहह्नहभुः ॥३०६ ॥

सुहभकं्षं राष्ट्रवृद्धिुः स्यात् बहुसस्या वसुन्धरा ।
बहुवृहिस्तथा सौख्यं पृथ्वीतत्त्वं विेद्यहद ॥३०७॥

अहतवृहिुः सुहभकं्षं स्यादारोगं्यं सौख्यमेव च।
बहुसस्या तथा पृथ्वी अप्तत्त्वं वै विेद्यहद ॥३०८॥

दुहभथकं्षं राष्ट्रभङ्गुः स्यादुत्पहत्तश्च हवनश्यहत ।
अल्पादल्पतरा वृहिरहितत्त्वं विेद्यहद ॥३०९ ॥

उत्पातोपद्रवा भीहतरल्पा वृद्धिुः सुयुरीतयुः ।

मिसंक्रान्दन्तवेलायां व्योमतत्त्वं विद्यहद ॥३१० ॥

मिसंक्रान्दन्तवेलायां व्योमतत्त्वं विद्यहद ।
तत्राहप ि◌ून्यता ज्ञेया सस्यादीनां सुखस्य च ॥३११ ॥

पूणथप्रविेने श्वासे सस्यं तत्त्वेन हसध्यहत ।
सूयथचन्द्रेऽन्यथाभूते संग्रि सवथहसन्दिदुः ॥३१२ ॥

हविमे वहह्नतत्त्वं स्याज्ज्ञायते केवलं नभुः।
ततुकुयाथिसुतुसंग्रिो हिमासे च मिार्थता ॥३१३ ॥

रवौ संक्रमते निाी चन्द्रमन्ते प्रसहपथता ।
खाहनले वहह्नयोगेन रौरवं ि◌गतीतले ॥३१४॥

अथ रोगप्रकरणम्

मीतत्त्वे स्वरोगश्च ि◌ले च ि◌लमातृतुः ।
तिहस खेटवाटीथथा ि◌ाहकनो हपतृदोितुः ॥३१५ ।।॥

आदौ ि◌ून्यगतो दूतुः पश्चात्पूणो हविद्यहद ।
मून्दच्छथतोऽहप ध्रुवं ि◌ीवेद्यदथे पररपृच्छहत ॥ ३१६ ॥

यन्दस्मन्नन्ने न्दथथतो ि◌ीवस्तत्रथथुः पररपृच्छहत ।
तदा ि◌ीवहत ि◌ीवोऽसौ यहद रोगैरुपिुतुः ॥३१७ ॥

दहक्षणेन यदा वायुदूथतो रौाक्षरो वदेत् ।
तदा ि◌ीवहत ि◌ीवोऽसौ चन्द्रे समफलं भवेत् ॥३१८॥

ीिवाकारं चा वा ि◌ृत्वा ि◌ीवाकारं हवलोक् च।
ीिवथथो ि◌ीहवतप्रश्ने तस्य स्याज्जीहवतं फलम् ॥३१९॥

वामचारे तथा दक्षप्रविे यि विाने ।
तत्रथथुः पृच्छते दूतस्तस्य हसन्दिनथ संयिुः ॥३२० ॥

प्रश्ने चिाुः न्दथथता ि◌ीवो नूनं ि◌ीवो हि ि◌ीवहत ।
ऊर्ध्वचारन्दथथतो ि◌ीवो ि◌ीवो याहत यमालयम् ॥ ३२१॥

हवपरीताक्षरप्रश्ने ररियां पृच्छको यहद ।
हवपयथयं च हवज्ञेयं हविमस्योदये सहत ।। ३२२ ।।

चन्द्रथथाने न्दथथतो ि◌ीवुः सूयथथाने तु पृच्छकुः ।
तदा प्राणहवयिोऽसौ यहद वैद्यितैवृथतुः ।। ३२३ ।।

हपङ्गलायां न्दथथतो ि◌ीवो वामे दूतसु्तु पृच्छहत ।
तदाऽहप हम्रयते रोगी यहद त्राता मिेश्वरुः ।।३२४ ।।

एकस्य भूतस्य हवपयथयेण
रोगाहभभूहतभथवितीि पुंसाम् ।
तयोिथयोबथिुसुहृहिपहत्तुः पक्षक्षये
व्यत्ययतो मृहतुः स्यात् ।।३२५ ।।

अथ कालप्रकरणम्

मासादौ चैव पक्षादौ वत्सरादौ यथाक्रमम् ।
क्षयकालं परीक्षेत वायुचारविदां बुधः ।।३२६ ।।

पञ्चभूतात्मकं दीपं हिवस्नेहेन हसहञ्चतम् ।
रक्षयेतूसूयथवातेन प्राणी ि◌ीवुः न्दथथरो भवेत् ।।३२७ ।।

मारुतं बिहयत्वा तु सूयथ बियते यहद।
अभ्यासाज्जीवते ि◌ीवुः सूयथकालेऽहप वहञ्चते ।।३२८ ।।
गगनात्स्रवते चन्द्रुः कायपद्माहन हसञ्चयेत् ।
कमथयोगसदाभ्यासैरमरुः ि◌हिसंश्रयात् ।।३२९ ।।

र्शिकि वारयेिात्रौ हदवा वायो हदवाकरुः ।
इत्यभ्यासरतो हनत्यं स योगी नात्रसंियुः ।।३३० ।।

अिोरात्रे यदैकत्र विते यस्य मारुतुः ।
तदा तस्य भवेन्मृत्युुः संपूणथ वत्सरत्रये ।।३३१ ।।

अिोरात्रियं यस्य हपंगलायां सदा गहतुः ।
तस्य विथियं प्रोिं ि◌ीहवतं तत्त्ववेहदहभुः ।।३३२ ।।

हत्ररात्रं विते यस्य वायुरेकपुटे न्दथथतुः ।
तदा संवत्सरायुस्तं प्रवदहत मनीहिणुः ।।३३३ ।।

रात्रौ चन्द्रौ हदवा सूयो बिेद्यस्य हनरन्तरम् ।
िानीयात्तस्य वै मृत्युुः ि◌ण्मासाभ्यंतरे भवेत् ।।३३४ ।।

लक्ष्यं लहक्षतलक्षणेन सहलले भानुयथदा दृश्यते
क्षीणो दहक्षणपहश्चमोत्तरपुरुः ि◌ट्हत्रहिमासैकतुः ।
मध्यं हछिहमदं भवेद्दिहदनं ि◌ूमाकुलं तहद्दने
सवथज्ञैत्रैरहप भाहितं मुहनवरैरायुः प्रमाणं स्फुटम् ।।३३५ ।।

दूतुः रिकाियकृष्णवसनो दन्तक्षतो

मुन्दण्डतसै्तैलाभ्यिीरीररजुजुककरो दीनोऽशुरुपूणोत्तरुः ।
भस्माङ्गारकपालपिामुसली सूयाथस्तमायाहत युः काली
नून्यिपदन्दथथतो गद्युतुः कालानलस्यादृतुः ।।३३६ ।।

अकस्मान्दच्चत्तहवकृहतरकस्मातुपुरुिोत्तमुः ।
अकस्माहदन्दन्द्रयोत्पातुः सहन्नपाताग्रलक्षणम् ।।३३७ ।।

रीरं ीतलं यस्य प्रकृहतहवथकृता भवेत् ।
तदररिं समासेन व्यासतसुतु हनबोि मे ।। ३३८ ।।

ििदुबे्िदु रमतेऽििुिबे्िदु चाप्यहत ।
पश्चात्तापो भवेदस्य तस्य मृतुयुनथसंियुः ।।३३९ ।।
हुंकारुः ीतलो यस्य फूत्कारो वहह्नसहन्नभुः ।
मिावैद्यो भवेद्यस्य तस्य मृतुयुभवेधु्रुवम् ।।३४० ।।

हिह्वां हवष्ुपदं धु्रुवं सुरपदं सन्मातृकामंलि-
मेतान्ेयेवमरुिीमममृतगुं ुक्र धु्रुवं वा क्षणम् ।
एतेष्वेकमहप सुफुटं न पुरुिुः पश्ेयेतुपुरुः पे्रहितुः
सोऽवश्ंयं हविीिी कालवदनं संवत्सरादूध्र्वतुः ।॥३४१ ।।

अरन्दश्हबम्ंबं सूयथस्य विुः ीतांिुमिाहलनुः ।
दृषवैकादिमासायुनथरश्ोधि्ं न ीवहत ।। ३४२ ।।

वाप्यां पुरीिमूत्राहण सुवणथ रितं तथा ।
प्रत्यक्षमथवा स्वप्ने दिमासान्न ीवहत ।। ३४३ ।।

क्वहचत्पश्यहत यो दीपं सुवणां च किान्दन्वतम् ।
हवरूपाहण च भूताहन नवमासान्न ीवहत ।।३४४ ।।

थथूलाङ्गोऽहप कृिुः कृिोऽहप सिसा थथूलत्वमालभ्यते
प्राप्तो वा कनकप्रभां यहद भवेतू्क्रूरोऽहप कृच्छ्हवुः ।
िूरो भीरुरसुिीरिमथहनपुणुः ांतो हवकारी पुमाहनत्ेयेवं
प्रकृती प्रयाहत चलनं मासािकं ीवहत ।।३४५ ।।

पिीा भवेत्पाहणतले च हिह्वामूले तथा स्यिा रुहिरं च कृष्म् ।
हविं न च ग्लायहत यत्र दृषट्या ीवेन्मनुष्युः स हि सप्तमासम् ।।३४६ ।।

मध्यांगुलीनां हत्रतयं न वक्रं रोगं हवना ुष्यहत यस्य कण्ठुः
मुहुमुथहुुः प्रश्नविेन ाढ्यात्- िन्दद्धुःस मासैुः प्रलयं प्रयाहत ।।३४७ ।।

न यस्य स्मरणां हकहञ्चहिद्यते भूतकमथहण ।
सोऽवश्ंयं पञ्चमे माहस स्किारूढो भहवष्यहत ।। ३४८ ।।

यस्य न सुफुरहत ज्योहतुः पीड्यते नयनियम् ।
मरणं तस्य हनहदर्थिं चतुथे माहस हनहश्चतम् ।।३४९ ।।

दन्ताश्य विृणौ यस्य न हकहञ्चदहप पीड्यते ।
तृतीयं मासमावश्ंयं कालाज्ञायां भवेन्नरुः ।।३५० ।।

कालो दूरन्दथथतो वाहप येनोपायेन लक्ष्यते ।
तं वदाहम समासेन यथाऽऽहर्दि हिवागमे ।। ३५१ ।।

एकान्ंतं हविनं गत्वा कृत्वाऽऽहदत्ंयं च पृष्ठतुः ।
हनरीक्षयेहन्निच्छायां कण्ठदेि समाहितुः ।। ३५२ ।।

ततश्चाकिामीक्ेषेत ह्रीं ंपरब्र्ह्मणे नमुः ।
अिौत्तरितं िप्त्वा ततुः पश्यहत िंकरम् ।।३५३ ।।

िुस्फिहटकसंकिां नानारूपिर िरम् ।
ण्मिासाभ्यासयोगेन भूचराणांपहतभथवेत् ।
विथियेन तेनाथ कताथ ित्ताथ स्वयंप्रभुः ।।३५४ ।।

हत्रकालज्ञत्वमाप्नोहत परमानन्दमेव च ।
स ततोभ्यासयोगेन नान्दस्त हंकंहचतुसुदुलथभम् ।।३५५ ।।

यिूपं कृष्वणां युः पश्यहतव्योहम्न हनमथले ।
ण्मिासान्मृतुयुमाप्नोहत स योगी नात्र संयिुः ।।३५६ ।।

पीते व्याहिभथयं रिे नीले िाहनं हवहनहदथिेत् ।
नानावणेऽथ चेत्तन्दस्मन्दन्सन्दिश्च गीयते मिान् ।।३५७ ।।

पदे गुल्फे च िठरे हविनािुः क्रमिो भवेत् ।
हवनश्यतो यदा बाह स्वयं तु हम्रयते ध्रुवम् ।।३५८ ।।

वामबाहुस्तथा भायाथ नश्यतीहत न संयिुः ।
दहक्षणे बिुनािो हि मृतुयुमासे हवहनहदथिेत् ।।३५९ ।।

अहिरो मासमरण हवना िर्े हदनािकम् ।
अिहभुः स्किनेिोन च्छायालोपेन तत्क्षणात् ।। ३६० ।।

प्रातुः पृष्ठगते रवौ च हनहमिाच्छायाऽङ्गुहलश्चािरं
दृषवाऽथिन मृहतन्दस्त्वनन्तरमिो छायां नरुः पश्यहत ।
तत्कणाांसकरास्यपाश्वथहृदयाभावे क्षणािाथत्स्वयं
हदङ्मूढो हि नरुः हिरोहवगमतो मासांस्तु ििि् िवहत ।। ३६१ ।।

एकाहीीीदोाहन यहद भानुहनथनारन्तरम् ।
विद्यस्य च वै मृतुयुः ीीौन च माहसके ।। ३६२ ।।

संपूणथ विते सूयथश्चन्द्रमा नैव दृश्यते ।
पक्ेषेण ायते मृतुयुः कालज्ञानेन भाहितम् ।।३६३ ।।

मूतं्रं पुरिी वायुश्च समाकालं प्रवत्तथते ।
तदासौ चहलतो जे्ञेयो दिो हम्रयते धु्रुवम् ।। ३६४ ।।

संपूणथ विते चन्द्रः सूयो नैव च दृश्यते ।
मासेन ायते मृतुयुः कालजे्ञेनानुभाहितम् ।।३६५ ।।

अरुितीं ंधु्रुवं चैव हवषोस्त्रीहण पदाहन च ।
आयुिींना न पश्यन्दन्त चतुथां मातृमण्डलम् ।।३६६ ।।

अरुितीं ंभवेन्दज्जह्वा धु्रुवा नासाग्रमेव च।
धु्रुवौ हवषु्पदं जे्ञेयं तारकं मातृमण्डलम् ।।३६७।।

नव धु्रुवं सप्त रिी पश्च तारां हत्रनाहसकाम् ।
हिह्वामेकहदनं प्रिीं हप्रयते मानवो धु्रुवम् ।। ३६८ ।।

कोणावक्षणेरंगुहलभ्यां हकहश्चत्पीड्य हनरीक्षयेत् ।
यदा न दृश्यते हबन्दुदथिोन भवेनूमृतुः ।। ३६९ ।।

तीथथस्नानेन दानेन तपसा सुकृतेन च।
पिध्याथनेन योगेन ायते कालवञ्चना ।। ३७० ।।

रिीरं नियनेत्येते दोिा ातुमलास्तथा ।
समसुतु वायुहवथजे्ञेयो बलतोहवविथनुः ।। ३७१ ।।

रक्षणीयस्ततो दिो यतो माथहदसिानम् ।
योगाभ्यासात्समायान्दन्त सिु याप्यासुतु साध्यताम्
असाध्या ीहवतं घ्न्दन्त न तत्रान्दस्त प्रहतहक्रया ।। ३७२ ।।
यिां हृहद सु्फुररतं ाश्वतमहितीयं
तिस्तमोहनविनािकरं रिस्यम् ।
तिामखण्डिहिरम्यासुकांहतभािां
स्वप्नेऽहप नो भवहत कालभयं नराणाम् ।। ३७३ ।।

इिा गंगेहत हवजे्ञेया हपंगला यमुना नदी ।
मध्ये सरस्वतीं ंवीद्यात्प्रयागाहदसमस्तथा ।। ३७४ ।।

आदौ सिानमाख्यातं सद्यः प्रत्ययकारकम् ।
बिपद्मासनो योगी बंियेदुहियानकम् ।।३७५ ।।

पूरकुः कुम्भकश्ैचैव रेचकश्च तृतीयकुः ।
ज्ञातव्यो योहगहभहनथतं्यं दिेसंुििन्दैितवे ।। ३७६ ।।

पूरकुः कुरुते वृन्दि िातुसाम्युः तथैव च।
कुम्भके स्तम्भनं कुयाथज्जीवरक्षाहवविथनम् ।।३७७ ।।

रेचको िरते पापं कुयाथद्योगपदं व्रिेत् ।
पश्चात्संग्रामवहत्तषे्ठेल्लयबिं च कारयेत् ।।३७८ ।।

कुम्भयेिर्त्सिं वायुं यथािन्दि प्रकल्पयेत् ।
रेचयेच्चन्द्रमागेण सूयेणापूरयेत्ुसिुीः ।। ३७९ ।।

चन्द्र हपबहत सूयथश्च सूयां हपबहत चन्द्रमाुः ।
अन्योन्यकालभावेन िीवेदाचन्द्रतारकम् ।।३८० ।।

स्वीयाङ्गे विते निी तन्नािीरािेनं कुरु ।
मुखबिममुञ्चन्ैवै पवनं ियते युवा ।। ३८१ ।।

मुखनासाहक्षकणाथन्तानंगुलीहभहनथरोियेत् ।
तत्त्वोदयहमहत ज्ञेयं िणमुखीकरणं हप्रयम् ।।३८२ ।।

तस्य रूपं गहतुः स्वादो मंिलं लक्षणं न्दत्वदम् ।
स वेहत्त मानवो लोके संसगाथदहप मागथहवत् ।।३८३ ।।

हनरािो हनष्कलो योगी न हकहञ्चदहप हचन्तयेत् ।
वासनामुन्मनां कृत्वा कालं ियहत लीलया ।।३८४ ।।

हवश्वस्य वेहदका िन्दिनेत्राभ्यां पररदृश्यते ।
तत्रथथं तु मनो यस्य याममात्रं भवेहदि ।। ३८५ ।।

तस्यायुवथिथते हनत्यं ईटकात्रयमानतुः ।
हिवेनोिं पुरा तिे हसिस्य गुणगह्वरे ।। ३८६ ।।

बद्ध्वा पद्मासनं ये गुदगतपवनं सहन्नरुद्ध्यामुचे्चसं्तं
तस्यापानरन्ध्क्रमहितमहनलं प्राणिक्त्या हनरुद्ध्य ।
एकीभूतं सुिुम्नाहववरमुपगतं ब्रह्मरन्ध् च नीत्वा
हनहक्षप्याकािमागे हिवचरणरतायान्दन्त ते केऽहप िन्याुः ।। ३८७ ।।

एतज्जानाहत योगी य एतत्पठहत हनत्युः ।
सवथदुुःखहवहनमुथिो लभते वान्दितं फलम् ।।३८८ ।।

स्वरज्ञानं नरे यत्र लक्ष्मीः पदतले भवेत् ।
सवथत्र च िरीरेऽहप सुखं तस्य सदा भवेत् ।।३८९ ।।

प्रणवुः सवथ वेदानां ब्राह्मणे भास्करो यथा ।
मृत्युलोके तथा पूज्युः स्वरज्ञानी पुमानहप ।।३९० ।।

निाीत्रयं हविानाहत तत्त्वज्ञानं तथैव च।
नैव तेन भवेत्तुल्यं लक्षकोहटरसायनम् ।।३९१ ।।

एकाक्षरप्रदातारं निाीभेदहववेचकम् ।
पृहथव्यां नान्दस्त तिव्यं यद्यत्त्वा चानृणी भवेत् ।।३९२ ।।

स्वरतत्त्वं तथा युिं देहव वश्यं न्दस्त्रयस्तथा ।
गभाथदानं च रोगश्च कलािथनैवमुच्यते ।। ३९३ ।।

एवं प्रवहतथतं लोके प्रहसि हसियोहगहभुः ।
चन्द्राकथग्रिणे िाप्यं पठतां हसन्दिदायकम् ।। ३९४ ।।

स्वरथथाने तु समासीनो हनिां चिाारमल्पकम् ।
हचन्तयेत्परमिाानं यो वेद स भहवष्यहत ।। ३९५ ।।

इडत श्री डिवपावयती संवादे स्वरोदयिास्त्रं समाप्तम् ।।